दयाल के सर्व समर्थ और कुल्ल मालिक होने का, और यह कि सुरत शब्द-मार्ग के सिवाय और कोई अभ्यास ऐसा आसान और धुर पहुँचाने वाला नहीं है, पूरा निश्चय धारण नहीं करेगा, और अपने मन और इन्द्रियों की निरख-परख यानी चौकीदारी होशियारी के साथ नहीं करेगा, तब तक उसकी तरक़्क़ी, परमार्थ की, राधास्वामी मत के मुवाफ़िक़, जैसा चाहिये, नहीं होवेगी। और न उन की दया और मेहर की परख और जाँच आवेगी कि जिससे उनके चरनों में प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ती जावे और सरन दृढ़ होती जावे।

८—ऐसी हालत, जैसी कि दफ़ा ६ में लिखी है, जिस किसी को दया से हासिल होती जावे, तो जानना चाहिये कि वही जीव मेहरी और बड़ भागी है, और वही एक दिन गुरुमुख बन जावेगा। क्योंकि सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के चरन उसके हिरदे में बस गये, और वे दिन २ संशय और भरम और संसारी चाहों का कूड़ा-करकट उसके हिरदे से निकाल कर एक, दिन पूरी सफ़ाई कर देंगे। और राधास्वामी दयाल की प्रीत की खटक ऐसी उसके हिरदे में पैदा कर देंगे कि वह किसी वक़्त और किसी काम में नहीं बिसरेगी। फिर ऐसे जीव, अपने उद्धार की सूरत, अपनी ज़िंदगी में आप देख कर, मगन हो जावेंगे और जब तक उनका देह और संसार में बासा है, तब तक

होशियारी से कार्रवाई करते रहेंगे, कि जिस में माया और मन ताक़त पाकर, किसी तरह से उनके काम में विघ्न न डालें।

६—इस वास्ते सब सतसंगी और सतसंगिनों को मुनासिब है कि जिस क़दर जिससे बन सके, राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर इसी तौर से जैसा कि ऊपर ज़िक्र हुआ है, होशियारी के साथ सतसंग और अभ्यास करें, और प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में बढ़ाते और पकाते जावें कि जिसमें उनका काम जल्दी बन जावे और किसी तरह का संशय और भरम मन में बाक़ी न रहे, और किसी क़दर सच्ची खटक उनके हिरदे में बस जावे कि जिससे कुल कार्रवाई परमार्थ की दुरुस्ती से जारी रहे और दिन २ तरक़्क़ी होती जावे और संसारी स्वभाव और आदतें परमार्थी चाल के साथ बदलती जावें।

बचन १३

मज़बूत करना प्रतीत और प्रीत का, राधास्वामी दयाल के चरन कँवल में

१—कुल कामों में चाहे परमार्थी होवें, चाहे दुनिया के, पहिले प्रतीत और यक़ीन दरकार है। जब तक कि

जीव को पूरी प्रतीत और यक़ीन, किसी अच्छे काम का, नहीं होता, तब तक वह उस काम को प्रीत और दुरुस्ती से नहीं करता, और न नाक़िस काम के करने से ख़ौफ़ खाता है।

२–प्रतीत में बहुत दरजे हैं। लेकिन बिना गहरी और पूरी प्रतीत के (कि जो किसी वक़्त और किसी हालत में चाहे दुख होवे या सुख, डिग न जावे, और एक रस क़ायम रहे) पूरा काम नहीं बन सकता, और वैसे तो जिस क़दर जिसकी प्रतीत है, उसी क़दर उसको फ़ायदा और फल उसका ज़रूर मिलेगा।

३–पूरी प्रतीत का दृष्टान्त यह है कि (१) जैसे किसी को कहा गया कि तेरे फ़लां मकान में ज़मीन के अन्दर इतनी गहराई पर ख़ज़ाना है। जो उसको इस बात की प्रतीत आ गई तो वह ज़रूर उसका खोदना शुरू करेगा और जब तक कि ख़ज़ाना नहीं निकले, तब तक बराबर मेहनत के साथ खोदना जारी रक्खेगा, और (२) जैसे किसी को कहा गया कि तेरे फ़लां मकान में ज़हरीला सर्प है, तो वह जब तक कि उस सर्प को निकालने का बंदोबस्त न हो जावेगा, तब तक ख़ौफ़ के मारे उस मकान में नहीं जावेगा।

४–इसी तरह परमार्थ के मुआमले में, जब तक कि गहरा सतसंग करके यानी तवज्जह और दुरुस्ती के साथ

बचन सुन कर, और उनका मन में अच्छी तरह विचार करके, पूरी प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में, कि वे कुल मालिक और सर्व समर्थ हैं, न आवेगी, तब तक मन थोड़ा-बहुत डावाँडोल रहेगा। यानी जब तक इधर-उधर भरम उठाता रहेगा और जब तक ऐसी हालत रहेगी, तब तक, जो अभ्यास कि संत सतगुरु ने बताया है, दुरुस्ती से नहीं बनेगा, और उसका थोड़ा-बहुत रस भी जैसा कि चाहिये, नहीं आवेगा, और फिर राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रतीत भी नहीं बढ़ेगी।

५—ऐसी प्रतीत के आने में कितने ही विघ्न अपना ज़ोर करते हैं और वह आगे लिखे जाते हैं, और उनके दूर करने का जतन भी लिखा जाता है। यह विघ्न या तो प्रतीत को डिगमिग कर देते हैं, या भुला देते हैं, या उस में संदेह पैदा कर देते हैं कि यह बात सच्ची है या नहीं, और इसमें वह फल जो कि संतों ने कहा है, मिलेगा या नहीं। और वे विघ्न यह हैं:—पहले, विशेष चाह मन और इन्द्रिय के भोग बिलास की, ओर लगे रहना उसी ख़्याल और जतन में। दूसरे, टेक और पकड़ अपने घराने के इष्ट और मत में। तीसरे, पकड़ और अटकाव उन बातों में, जो विद्यावान और चतुरे लोगों ने मालिक और उसके मतों की निस्बत अपनी किताबों में लिखी हैं। चौथे, पकड़ अपनी बुद्धि की समझौती में जो और मतों

का हाल पढ़ कर और सुन कर और थोड़ी-बहुत विद्या हासिल करके पैदा की है। पाँचवें, बे-ख़ौफ़ी मौत और नरकों के दुक्खों से और बे-परवाही निसबत अपने जीव के कल्यान के। छठे, अपनी अनजानता और ओछी समझ करके निंदकों के बचन सुन कर भरम जाना। सातवें, पुराने इष्ट और पिछले महात्मा और औतार और देवताओं में, जो कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के नीचे और उनके पैदा किये हुये हैं, भाव का होना, और मन में थोड़ा-बहुत संसारी नफ़े या नुक़सान का ख़ौफ़ करके उस भाव का क़ायम रहना। आठवें, अभ्यास यानी भजन और ध्यान के वक़्त, जैसा मन चाहता है, रस के न मिलने से, मन का रूखा और फीका या निरास हो जाना। नवें, अपनी या अपने कुटुम्बियों की तकलीफ़ के वक़्त राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रार्थना करने से, और उस तकलीफ़ के जल्द दूर न होने या घटने से, चित का दुखी और किसी क़दर सुस्त और निरास हो जाना।

६–पहिले विघ्न की निस्बत इस क़दर बयान करना काफ़ी है कि दुनिया के कारखाने को नज़र-ए-ग़ौर से देखना और उसके भोग और पदार्थों को तुच्छ और नाशमान समझ कर और अपनी मौत की याद चित्त में लाकर, उनकी चाह और क़दर, किसी क़दर मन से कम करना, और दुनियादारों के व्यवहार और बर्ताव को जाँच कर

उसका पूरा भरोसा न करके चित्त से उनकी क़दर को घटाना। यह बात कोई दिन में चेत कर सतसंग करके हासिल होगी। वाजबी और ज़रूरी चाह और क़दर दुनिया के सामान की (जिस क़दर कि अपने औसत दरजे पर गुज़ारे के लायक़ दरकार होवे) करने में हर्ज नहीं है। लेकिन तृष्णा और फ़िज़ूली परमार्थ में विघ्न कारक है।

७–दूसरा विघ्न, ख़ूब समझ २ कर सतसंग करने और राधास्वामी मत के उसूल और क़ायदे अच्छी तरह से समझने से, दूर हो सकता है।

८–खोजी और दर्दी जीवों को ऐसा ख़्याल नहीं रखना चाहिये कि जो ऊँचे से ऊँचा और सच्चे मत का हाल सुने तो उसको अपने घराने के पुराने मत से मिला कर जैसे बने, तैसे एक ही, और बराबर माने। क्योंकि दुनिया में हर एक चीज़ में दरजे हैं, और इसी तरह परमार्थ में भी बहुत दरजे हैं, और हर एक मत एक-एक दरजे से ताल्लुक़ रखता है? फिर सब मत बराबर कैसे हो सकते हैं। इस वास्ते जो मत कि सब से ऊँचा और गहरा है, और उसके पेट में सब दरजे आ गये हैं, तो वही मत सब से बड़ा है। और यह बात सिर्फ़ राधास्वामी मत में पाई जाती है। इस वास्ते अपने जीव के कल्याण के लिये उसको सब से बड़ा मानना

ज़रूर है, और अपने पुराने और ओछे मत की टेक को छोड़ना मुनासिब है।

६—तीसरे विघ्न की निस्बत इतना बयान करना काफ़ी होगा कि जितने विद्यावान और चतुरे पुराने वक़्तों में हो गये, या ज़माने हाल में मौजूद हैं, वे सब, नतीजे को देख कर, उसके सबब को बुद्धि से दरियाफ़्त करके, जहाँ तक कि उनकी नज़र और समझ की पहुँच हुई, बयान करते हैं, और असल हाल और आदि सबब की उनको ख़बर नहीं है। क्योंकि वह उनकी बुद्धि और नज़र की हद्द से बहुत दूर है, और बग़ैर अपने अंतर में अभ्यास करने के, और अपने मन और सुरत की चढ़ाई करने के, मालूम नहीं हो सकता, और इन लोगों में अन्तर का अभ्यासी, और घट के भेद से ख़बरदार कोई नहीं हुआ और न है। और यह बात उनकी बानी और बचन से साफ़ ज़ाहिर है। यानी उस में, घट के हाल और अभ्यास का कहीं भी ज़िक्र नहीं आया है। फिर उनके बचनों को संतों के बचन के मुक़ाबले में, जिन्होंने कि सब हाल और भेद असली और आदि स्थान और कुल्ल रचना को देख कर कहा है, कैसे सही और दुरुस्त मान सकते हैं? उनको, न तो मालिक कुल्ल का दर्शन मिला और न उसकी कुदरत की, जो कि ऊँचे देशों की रचना में प्रकट है, ख़बर पड़ी। फिर जो कोई उनके बचन को मानेगा, वह सच्चे मालिक से विमुख होकर, हमेशा

किसी न किसी क़िस्म की देही धारन करके, दुख-सुख भोगता रहेगा और जनम-मरन के चक्कर से कभी छुटकारा उसका नहीं होगा।

१०—इस बात का सिर्फ़ इसी क़दर सबूत काफ़ी है कि कुल्ल जीव, क्या विद्यावान और क्या मूरख, इस दुनिया में, माया और उसके पदार्थ, और माया-धारियों के, आशिक़ हो गये, यानी उन्हीं में उनका भाव और प्यार और उन्हीं की चाह उनके दिल में रही, और सच्चे मालिक का भय और भाव उनके मन में नहीं आया। बल्कि उसकी मौजूदगी में भी शक और संदेह उनके मनों में रहा, और संत और साध जन उस सच्चे मालिक के, निहायत दरजे के प्रेमी और आशिक़ हुये, और अपनी बानी और बचन में उसी की महिमा और प्रीत का वर्णन किया। अब ख़्याल करो कि जो विद्यावानों को उस सच्चे मालिक की कुछ भी खबर पड़ी होती, या कुछ भी जलवा उसके अपार और अथाह नूर का नज़र आया होता, तो वे, दलीलें और हुज्जतें विद्या और बुद्धि से बना कर, जीवों को क्यों भरमाते? और उनके दिल में उस सच्चे मालिक का इश्क़ और प्रेम क्यों नहीं आया? और उसी को सब जीवों को क्यों नहीं दृढ़ाया और उस मालिक की महिमा क्यों नहीं गाई? इसी से साफ़ ज़ाहिर है कि न तो उन्होंने उस मालिक का दर्शन पाया, और न उसकी अथाह क़ुदरत

की ख़बर पाई और न पूरा यक़ीन उसकी मौजूदगी का उनके दिल में आया, फिर यह लोग सब के सब, उस सच्चे मालिक से विमुख रहे, और इस वास्ते जो कोई उन की किताब और बचनों को पढ़ेगा या सुनेगा और मानेगा वह भी उनके मुवाफ़िक़ बिमुख रहेगा। और हाल यह है कि सच्चा कुल्ल मालिक ज़रूर मौजूद है।

११—देखो, यह लोक और कुल्ल उसकी रचना, वास्ते अपनी पैदाइश और परवरिश के, इस सूरज की जो विशेष चैतन्य है, आधीन है। और यह सूरज, मय अपने तारा मंडल के, दूसरे सूरज का, जो इसका भी विशेष चैतन्य है, आधीन है। यहाँ तक तो इल्म नजूम और दूरबीन की मदद से मालूम हुआ है। और संत फ़रमाते हैं कि उस सूरज के ऊपर तीन बड़े से बड़े सूरज मंडल और हैं। जो अख़ीर मंडल है वही अपार और अनंत है और वही कुल्ल मालिक का धाम है। इस हिसाब से सच्चे और कुल्ल मालिक का मौजूद होना साबित हुआ, और जो कि कुल्ल रचना में कारीगरी और समर्थता उसकी क़ुदरत की, और इरादा और मतलब हर एक चीज़ के पैदा करने का, ज़ाहिर है, इस वास्ते वह कुल्ल मालिक, कुल्ल इल्म और ज्ञान और सर्व समर्थता और समझ-बूझ और ताक़त का भंडार है। अब ख़्याल करो कि जो कोई उसकी मौजूदगी में शक लावे या उसको अचेत और अज्ञानी और बे-ताक़त और बे-समझ ठहरावे

तो किस क़दर वह भारी पापी और गुनहगार होगा और उसकी दया और मेहर से किस क़दर दूर पड़ेगा और अभागी रहेगा ?

१२—चौथा विघ्न, मिस्ल विघ्न नम्बर दो के, चेत कर सतसंग करने और संतों की बानी और बचनों को, पक्षपात छोड़ कर, निर्मल बुद्धि से विचारने से, दूर होवेगा। संतों के सतसंग में हर एक बात का अच्छी तरह से निर्णय होता है, और वे नहीं चाहते कि कोई शख़्स उनके वचन को बे समझे हुए और बिना निर्णय करने के, अंधों और मूरखों की तरह मान लेवे। इस वास्ते खोजी, और दरदी को मुनासिब है कि जो बात कि उसने और मतों का हाल सुन कर या पढ़ कर या उनमें से किसी में शामिल होकर, अपने निश्चय में क़ायम की है, उसका निर्णय अच्छे तौर पर संतों के सतसंग में करावे, तब उसको ख़बर पड़ेगी कि आया उसकी समझ दुरुस्त है या नहीं। और जब ना-दुरुस्त या ओछी मालूम पड़े, तब फ़ौरन उसको छोड़ देवे। और इस बात की पक्ष न करे कि अपनी समझी हुई बात को एकाएक क्यों और कैसे छोड़ देवे। बल्कि संत मत का उसके साथ कोशिश करके मिलान न करना चाहिये। यह निहायत नादानी की बात है और इसमें बड़ा नुक़सान खोजी का होता है। क्योंकि जब संत देखेंगे कि यह शख़्स बे-फ़ायदा हुज्जत करता है और मतलब उसका अपनी

समझ के क़ायम रखने का है, न कि सच्ची बात को तहक़ीक़ और दरियाफ़्त करके पकड़ने और ग्रहण करने का, तब वे तवज्जह नहीं करेंगे। और यह शख़्स असल और सच बात के समझने और पकड़ने से महरूम रह जावेगा। और अपने जीव के कल्याण करने में आप अपनी ओछी समझ और उसकी पकड़ में मूर्खों के मुवाफ़िक़ हठ करने से विघ्नकारक होगा। क्योंकि जितने मत दुनिया में जारी हैं, वे सब संत मत के मुक़ाबले में ओछे हैं। और विद्यावान और बुद्धिमानों के मत तो बिलकुल अक़्ली हैं और असल और सच्ची बात से बे-ख़बर। फिर जिस किसी मत की, यह शख़्स, पकड़ धारन करेगा, वह ज़रूर ओछा होवेगा। और उस पकड़ में हठ करने से इसके पूरे और सच्चे उद्धार में ख़लल आवेगा, यानी सच्चे मालिक के धाम में नहीं पहुँचेगा, रास्ते में कहीं न कहीं माया के घेर में ठहर जावेगा। और चाहे देर के साथ फिर पैदा होवे, पर जनम-मरन और उसके साथ दुख-सुख के भोग की उपाधि दूर नहीं होवेगी।

१३—पाँचवाँ विघ्न विषई यानी ऐयाश और संसारी लोगों के संग से पैदा होता है। वे लोग इन्द्रियों के भोग नहीं छोड़ना चाहते, और इस सबब से कोई बात जो उनके इन्द्रियों के विषयों के रस लेने में ख़लल डाले, उसको मानना नहीं चाहते, और अपनी काम, क्रोध और लोभ, मोह की सनी हुई बुद्धि से, संतों और महात्माओं के बचनों को,

झूठ मूठ का ख़ौफ़ दिखाने वाले समझ कर, उनका निरादर करके यक़ीन नहीं लाते हैं, और कहते हैं कि आक़बत की खबर खुदा जाने, अब तो आरम से गुज़रती है। यानी आख़िरत के हाल को सिवाय मालिक के और कोई नहीं जानता, अब जो ऐश और आराम मिल रहा है, इसको क्यों छोड़ें ? ऐसे जीव इसी जनम में दुख-सुख के धक्के खाते हैं और रोग-सोग भोगते हैं और फिर भी नहीं चेतते। आख़िरत में उनको बहुत भारी तकलीफ़ और कष्ट भोगने पड़ेंगे और तब अपनी ग़लफ़त और बे-परवाही पर हाथ मल कर अफ़सोस करेंगे। लेकिन उनका उस वक़्त का पछतावा कुछ फ़ायदा नहीं देगा।

१४—ज़ाहिर है कि जितने दुनिया के भोग हैं, वे सब नाशमान हैं और जो ज़्यादा उनका भोग किया जावे तो फ़ौरन दुख पैदा करते हैं। और जो मन में चाह उन्हीं की ज़बर रही और उन्हीं की प्राप्ति के लिये उमर भर जतन करते रहे, तो इसी ज़िन्दगी में जब बुढ़ापा आता है, वे लोग ब-सबब बे-ऐतदाली के, किसी न किसी रोग में मुब्तिला होकर, बहुत दुख भोगते हैं। और जब स्वभाव के मुवाफ़िक़ उन भोगों की चाह उठाते हैं तब या तो वे भोग, निर्धनता के सबब से, मुयस्सर नहीं आते, या बीमारी के सबब से उनको भोग नहीं सकते, और तड़प २ कर जान देते हैं। फिर थोड़े दिन का ऐश और आराम भोग करके

किस क़दर दुख और निरादर और मन और इन्द्रियों को ज़बरदस्ती रोकने की तकलीफ़ उठाते हैं। इस वास्ते अक़्लमन्द आदमी को, पहिले ही से, समझ कर और दुनिया को हाल, और विषई लोगों की हालत देख कर नसीहत लेना और आप होशियारी से बर्तना चाहिये।

१५—छठा विघ्न बहुत भारी नुक़सान करता है, यानी जीव निन्दकों के बचन सुन कर बे विचारे या तहक़ीक़ किये हुए, या बग़ैर अपनी आँख से हाल और चाल देखने के, सतसंग से हट जाते हैं और अपने कच्चे शौक़ को दबा लेते हैं। इस वास्ते खोजी और दर्दी को मुनासिब है कि जो बात सुने, उसको पहिले महात्माओं या परमार्थी लोगों के बचन और चाल से मिलावे, या जो उसको यह ताक़त नहीं है तो आप, सतसंग में जाकर, वहां की चाल-ढाल अपनी आँख से देखे, और जिस बात में शक होवे उसको बे तकल्लुफ़ खोल कर बयान करके उसकी असलियत को दरियाफ़्त करे। और जो चाल उसके ना पसंद होवे तो उसके जारी करने का सबब और उसका फ़ायदा, निर्णय करके समझे। तब उसको ख़बर पड़ेगी कि निंदक लोग भारी नादान हैं। कभी आप जाकर उन्होंने कोई चाल नहीं देखी और न कोई बात सुनी। ग़रज़मन्दों के कलाम को मूर्खों के तौर पर मान लिया और सतसंग को बुरा-भला कहने लगे। और गरज़मन्द वे लोग हैं कि जो संतमत यानी अंतर के

अभ्यास के जारी होने में, चाहे वह वेद और शास्त्र और पुरान और क़ुरान के मुवाफ़िक़ है, अपना नुक़सान समझते हैं, क्योंकि वे परमार्थ के रास्ते से बिल्कुल बे-खबर हैं। सिर्फ़ रोज़गार के ख़ातिर दो-चार क़िस्से कहानी की किताबें और इसी क़िस्म की बातें बाहरमुख पूजा और इष्ट की, दुनियादारों के बहलाने और फुसलाने और अपना मतलब निकालने के लिये, याद करते हैं। और घरों में जाकर औरतों को ख़ौफ़ दिलाते है कि जो तुम्हारे मर्द उस सतसंग में जावेंगे तो तुमको और दुनिया को छोड़ देंगे। और मर्दों को समझाते हैं कि जो औरतें सतसंग में जावेंगी तो ख़राब होवेंगी और इसमें बड़ी बदनामी होवेगी। और जब किसी को सुनते हैं कि वह ख़िलाफ़ उनकी समझौती के सतसंग में जाने लगा तो वे उसकी बिरादरी के लोगों से मिल कर, उस की हँसी उड़ाते हैं, और तान और ठठोली की बातें कह कर दस-बीस आदमियों के जलसे में उसको शर्म दिलाते हैं, ताकि वह ख़ौफ़ और शरम खाकर जल्द सतसंग में जाना छोड़ देवे। जो कोई ऐसे ख़ुद-मतलबी लोगों या मूरख संसारियों के बचन, निंदा के, सुन कर सतसंग में शामिल नहीं होवेगा, या थोड़े दिन शामिल होकर उनके डर से हट जावेगा, वह अपने जीव के सच्चे कल्याण में आप विघ्नकारक और हारिज होवेगा।

१६—सातवें विघ्न का सबब यह है कि इस जीव के

दिल में दुनिया और उसके सामान और संसारी लोगों का भाव और क़दर ज़्यादा है, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में अच्छी तरह सतसंग करके, जैसी चाहिये, वैसी प्रीत और प्रतीत नहीं आई। मूरख और ख़ुद मतलबी लोगों के डराने से यह जीव जल्द अपने ऐतक़ाद से फिसल जाता है, और समझता है कि जो पुराने इष्टों को छोड़ दिया जावेगा तो वह कुछ न कुछ इसका संसारी नुक़सान कर देंगे, और ज़रा नहीं सोचता कि जो कुछ आराम या तकलीफ़ होती है, वह अपने पिछले कर्मों का फल है, और जब कि कोई राधास्वामी दयाल की सरन में आया तो वह तकलीफ़ भी उनकी दया से बहुत कम हो जाती है।

१७—किसी देवता या औतार की ताक़त नहीं है कि बे-वास्ता किसी जीव को तकलीफ़ दे सके। जो कुछ कि होता है वह जीव के पिछले कर्मों का भोग है, और वह कर्म राधास्वामी मत के अभ्यास करने से दिन २ हलके होते और घटते जाते हैं।

१८—आदमी को चाहिये कि नज़र-ए-ग़ौर से देखे कि दुनिया में जीवों को कैसी २ सख़्त तकलीफ़ें हो रही हैं, और हर एक अपने ख़ानदानी मत और इष्ट को मान रहा है, फिर जो उन इष्टों में ताक़त तकलीफ़ देने की है तो तकलीफ़ दूर करने की भी होगी। फिर वे क्यों नहीं उन जीवों की सहायता करते ?

१६—इस वास्ते मूरखों और ग़रज़मंद लोगों के धमकाने से कि फ़लाँ तकलीफ़ राधास्वामी मत में शामिल होने से हुई, कभी किसी को अपनी प्रतीत और प्रीत में डर कर ख़लल नहीं डालना चाहिये। यह कहन ऐसे लोगों की बिलकुल ग़लत और बनावट की है और जो अ-विचारी हैं और सतसंग चेत कर नहीं करते, वे ऐसी धमकियों में आकर सतसंग से हट जाते हैं और अपना नुक़सान आप करते हैं। और अक़्लमंद और समझवार लोग जो सतसंग समझ-समझ कर करते हैं, वे सैकड़ों नमूने इस दुनिया में दे सकते हैं कि, बग़ैर छोड़ने अपने इष्ट और मत के, बहुत से आदमी दुख भोगते हैं, बल्कि तान मारने वाले और धमकाने वाले आप ही ऐसी तकलीफ़ों में मुब्तिला होते हैं। फिर जो सबब उनके दुक्खों और तकलीफ़ का है, वही उन जीवों की तकलीफ़ का जो राधास्वामी मत में शामिल हुए हैं समझ लेना चाहिये। बल्कि इन जीवों की किसी क़दर सहायता राधास्वामी दयाल अपनी दया से तकलीफ़ की हालत में भी फ़रमाते हैं। और वे जीव जो और मतों में हैं और ज़ाहिरा अपने इष्ट को मानते नज़राई देते हैं, और अंतर में पूरा यक़ीन नहीं रखते; उनकी सहायता कुछ भी नहीं होती, और अपने इष्ट को छोड़ कर इधर-उधर सहायता के वास्ते भटकते हैं और भरमते फिरते हैं।

२०—आठवाँ विघ्न अक्सर उन लोगों को सताता है

कि जो अभ्यास में रस कम पाते हैं या अपने मन की चाह के मुवाफ़िक नहीं पाते हैं या जिनको शब्द साफ़ नहीं मालूम हुआ है।

२१—यह लोग जल्दी करते हैं और यह नहीं ख़्याल करते हैं कि हर एक जीव का अधिकार मुवाफ़िक़ उसके शौक़ और मन की निर्मलता और चित्त की निश्चलता के जुदा २ है। और जिस क़दर निर्मलता और निश्चलता की कसर है, उसी क़दर रस के मिलने में भी देर है। सो इसका यही इलाज है कि नेम से अभ्यास करे जाय और मन और इन्द्रिय और चित्त को अभ्यास के वक़्त जिस क़दर मुमकिन होवे, रोक कर, स्वरूप या शब्द में लगावे, और जब-तब प्रार्थना भी करता रहे तो आहिस्ता २ सफ़ाई होती जावेगी और रस मिलता जावेगा।

२२—बाज़े सतसंगी अपनी चाह के मुवाफ़िक़ कुछ क़ुदरत का खेल और तमाशा अंतर में देखना चाहते हैं। और जो वह नज़र न आवे तो ख़्याल करते हैं कि हमको कुछ हासिल नहीं हुआ। और हाल यह है कि जो कुछ सैर नज़र आवेगी, वह मायक होगी और क़ायम नहीं रहेगी। सतसंगी को चाहिये कि अपनी तरक़्क़ी के वास्ते अपने मन और सुरत को एकाग्र करके स्वरूप के या शब्द के आसरे, पहिले या दूसरे स्थान पर जमावे। वहाँ जिस क़दर ठहराव होगा, उसी क़दर रस ज़रूर आवेगा। इसी को

अभ्यास का फल समझे और दिन २ इसी में तरक़्क़ी करता जावे।

२३—जो किसी पिछले या हाल के कर्मों के चक्कर से मन और सुरत एकाग्र और स्थिर न होवें तो घबरावे नहीं, और न निरास न होवे, और न यह समझे कि राधास्वामी दयाल उस पर दया नहीं करते हैं। बल्कि ऐसे वक़्त में ज़्यादातर कोशिश और होशियारी से अभ्यास करे, और जो भजन में मन न लगे, तो ध्यान ही करे, और जो उसमें भी मन न लगे तो धुन के साथ नाम का सुमिरन और पोथी का पाठ करे। आहिस्ता २ चक्कर बदलेगा, और अभ्यास में ब-दस्तूर रस आने लगेगा। ऐसे वक़्त में बानी और बचन को पढ़ कर, प्रीत और प्रतीत की ज़्यादा सम्हाल करे कि डिगमिग न होवे। नहीं तो धुन के साथ सुमिरन और पोथी का पाठ भी अच्छी तरह नहीं बन सकेगा।

२४—और मालूम होवे कि पोथी का पाठ अर्थ समझ कर और जो उसमें स्थानों का ज़िक्र है उन पर मन और सुरत को फेर कर, यानी स्वरूप के आसरे जमा कर करे, तो वह भी थोड़ा-बहुत भजन और ध्यान की बराबर रस दे सकता है। इस वास्ते मुनासिब है कि पहिले दो शब्द चितावनी के पढ़ कर, फिर प्रेम और भेद के शब्दों का पाठ

करे तो मन किसी क़दर सिमट कर लगेगा और तब रस भी आवेगा।

२५—नवें विघ्न के दूर करने या उसके असर को कम करने का जतन यह है कि सतसंगी अपने मन में विचार करे कि जो तकलीफ़ उसको या उसके कुटुम्बियों को होती है, वह पिछले कर्मों का भोग है, और उस में भी किसी क़दर सहायता राधास्वामी दयाल की संग है। यह बात नहीं है कि वे उस तकलीफ़ को नहीं देखते हैं और दया नहीं करते हैं। सतसंगी को चाहिए कि धीरज के साथ बरदाश्त करे, और जो बीमारी है तो दवा भी करे, और जो मन न माने तो चरनों में प्रार्थना करे कि या तो थोड़ी-बहुत बरदाश्त की ताक़त दी जावे या वह तकलीफ़ कम या दूर कर दी जावे। पर ऐसी आस धर कर प्रार्थना न करे कि फ़ौरन उसका असर पैदा होवे। किसी क़दर मौज का भी आसरा रक्खे और जिस मसलहत से कि तकलीफ़ भेजी गई है उसका भी विचार करे। और जो मसलहत समझ में न आवे तो बहुत घबराहट या निरास्ता मन में न लावे। आहिस्ता २ दया का ज़हूर होवेगा, और जैसी मौज होगी उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई होवेगी। यानी जो कभी मौज इसके मन की चाह के बर-खिलाफ़ है तो वैसा नतीजा ज़ाहिर होगा और जो मुवाफ़िक़ है तो जल्दी या आहिस्ता २ दुख दूर होता जावेगा। सतसंगी को दोनों

सूरत में धीरज और बरदाश्त के साथ राधास्वामी दयाल की मौज के साथ मुवाफ़िक़त करनी चाहिये और जहाँ तक मुमकिन होवे, रूखा-फीका होकर अपनी प्रीत और प्रतीत में खलल या कसर पैदा न होने न होने देना चाहिये। नहीं तो दुख आर तकलीफ़ दुचंद व्यापेगी। और जो धीरज के साथ वह सतसंगी अपने चित्त को जब-तब चरनों में जोड़ता रहेगा, तो किसी क़दर दया का असर यानी शांति अंतर में मालूम होगी, और तब उस तकलीफ़ या दुख का असर कम व्यापेगा।

२६—जो सतसंगी कि होशियारी के साथ सतसंग और अभ्यास करता है, और जिसने ऊपर के लिखे हुए विघ्नों को अच्छी तरह निर्णय करके समझ लिया है, और उनके दूर करने का जतन भी करता रहता है, तो उसको वे विघ्न कम सतावेंगे, और जो कभी पेश भी आवेंगे तो बहुत कम ठहरेंगे, और उसकी प्रीत और प्रतीत में बहुत कम खलल डालेंगे। और फिर वह सतसंगी आहिस्ता २ अपनी प्रतीत और प्रीत को पूरे दरजे पर पहुँचा कर राधास्वामी दयाल की पूरी दया और मेहर पाकर गुरुमुखता का दरजा हासिल करेगा, यानी सब तरह इसी ज़िंदगी में अपना काम राधास्वामी दयाल की दया से पूरा बनवा लेगा।

बचन १४

वर्णन प्रीत और प्रतीत का गुरु चरनन में

भाग पहिला

१–बचन नम्बर १३ में हाल प्रीत और प्रतीत का कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में, लिखा गया है, और जो विघ्न कि मज़बूत करने प्रीत और प्रतीत में वहाँ हारिज होते हैं, वही थोड़े-बहुत गुरु सतगुरु की प्रीत और प्रतीत मज़बूत करने में पेश आते हैं। इस वास्ते जो जतन कि उनके दूर करने या घटाने के लिये वहाँ बताये गये हैं, वही थोड़े-बहुत यहाँ भी काम देवेंगे।

२–जैसे वहाँ अनेक मत और अनेक इष्ट यानी मालिक क़रार दिये गये हैं, ऐसे ही अनेक तरह के गुरु भी पैदा हुए हैं। यानी हर एक ने अपना इष्ट और अभ्यास जुदा २ मुक़र्रर किया और जुदी जुदी शिक्षा जारी करी। और जो थोड़े से अपनी २ हद्द में सच्चे भी हुए, उनकी नक़ल करने वाले झूठे गुरु बहुत से बन बैठे, और जीवों को तरह २ के धोखे देकर उनसे सेवा कराने लगे, और उनका धन हरने लगे, और कहीं २ ज़बरदस्ती और ज़ोर के साथ अपनी पूजा कराने लगे।

३—इस सबब से बारम्बार और जगह २ धोखे खाकर जीवों के दिल में अनेक तरह के शक और संदेह पैदा हो गये। यहाँ तक कि चाहे कोई सच्चा होवे या झूठा और पूरा होवे या अधूरा, एकाएक उसकी प्रतीत कोई नहीं कर सकता, और दिल में ख़ौफ़ रहा आता है कि शायद पाखंडी और दग़ाबाज़ न होवे।

४—सिवाय इसके अनेक मत और इष्टों के जारी होने से, जो कोई सच्चे मत और पूरे और सच्चे इष्ट का भेद बतावे, उसकी लोग प्रतीत नहीं लाते। बल्कि शुरू में ऐसा ख़्याल करते कि अपनी नई दुकान चलाने के वास्ते नई बातें अपने मन से पैदा करके जारी करना चाहते हैं। और ज़ाहिरी रस्म और बर्ताव को देख कर और उसकी असलियत को ज्यों का त्यों न समझ कर निंदा करने लगते हैं।

५—सबब इन बखेड़ों का जो कि सच्चे और पूरे गुरु की प्रतीत और प्रीत हिरदे में बसाने के पैदा हुए, यह है कि लोग अपने ख़ानदानी मत से ना-वाक़िफ़ हैं यानी वेद और शास्त्र और क़ुरान वग़ैरा के असली मतलब से बे-खबर हैं। और जो राह और रस्म और क़ायदा और व्यवहार सच्चे परमार्थ का है, उससे भी ना-वाक़िफ़ हैं। सिर्फ़ रस्मी और बाहरमुखी परमार्थ निहायत नीचे दरजे का, जो कि हर एक मत में रोज़गारी या विद्यावान लोगों ने जारी

किया है उसीसे बिधी मिलाया चाहते हैं, और अपनी अनजानता से शक और शुबहा पैदा करके बे-फ़ायदा निंदा स्तुति करने लगते हैं।

६--सिवाय इसके संसारा लोगों को, जब तक कि उन्होंने कहीं सतसंग नहीं किया है और न अपने मन और बुद्धि से परमार्थ की तरफ़ कुछ ख़याल और तवज्जह और विचार किया है, पूरे और सच्चे गुरु की परख आनी बहुत मुश्किल है। वे दूसरों की कहन यानी राय पर चलना चाहते हैं। और वे दूसरे भी थोड़े बहुत उसी क़िस्म के लोग हैं, चाहे वह परमार्थी लिबास पहनते हैं या परमार्थी काम करते नज़र आते हैं, जैसे भेषधारी और पंडित और मौलवी वग़ैरा।

७--यह लोग आप या तो संसारी हैं या संसारियों का संग देने वाले हैं। इनको पूरे गुरु से आप भेंटा यानी मुलाक़ात नहीं हुई, और न उन से मिल कर कुछ भेद मालिक का सुना और समझा। फिर वे किसी को क्या समझा सकते हैं या पूरे गुरु के बचन सुन कर उनकी गति को क्या परख सकते हैं? और जो कि वे आप रस्मी या बाहरमुख परमार्थ के काम कर रहे हैं, या विद्या पढ़ कर बातें बनाते हैं, और असल हाल अंतरी से ना-वाकिफ़ हैं, इस वास्ते उनकी समझ और कहन सच्चे मत और सच्चे गुरु की निस्बत ऐसी ही होगी, जैसी कि संसारियों और

विद्या और बुद्धिमानों की होती है। और जगत के जीव इन्हीं की समझ और कहन के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करते हैं। यानी ऐसे लोगों की बातें सुन कर और सच्चे गुरु की परख और पहिचान न करके उनकी और उनके मत की निंदा करने लगते हैं और उस में शामिल होने से डरते हैं।

८—जो कोई सच्चा परमाथी है और उसके मन में दर्द और खोज सच्चे मालिक से मिलने और उसके रास्ते और भेद को जानने का है, वह जल्द सच्चे गुरु के सन्मुख आकर और बचन सुन कर थोड़ी सी पहिचान कर सकता है। पर शर्त यह है कि किसी दूसरे के मत की चाल-ढाल में या अपनी विद्या और बुद्धि की समझौती में अटक कर उसकी पक्ष धारन न करे, और निर्मल बुद्धि और समझ से सच्चे खोजियों के मुवाफ़िक़ बचन सुन कर अपने में आप उनको परखता जावे, और कुल्ल रचना की हालत से जो कि इन आँखों से प्रकट दिखाई देती है, मिला कर उन बचनों की प्रतीत करे।

९—ग़ौर करने की बात है कि जो कोई दुनिया के हाल को कि नाशमान और सब पदार्थ उसके नाशमान, और तुच्छ रस और सुख देने वाले हैं, और अपनी देह और इन्द्रियों को जड़ समझ कर इस तरफ़ से चित्त को हटा कर ख़्याल करे कि जैसे कुल्ल रचना में उत्तम से निकृष्ट तक बहुत से दरजे हैं, इसी तरह इस लोक और

उसकी रचना से बढ़ कर भी ज़रूर और रचना ऊँचे दरजे में होना चाहिये। और जो कि इस रचना से बेहतर और बड़े दरजे की रचना होगी, वह विशेष सुखदाई और ज़्यादा देर तक ठहरने वाली भी ज़रूर होगी। इसी तरह ऊँचे से ऊँचे दरजे का रचना सब से बढ़ कर और हमेशा क़ायम रहने वाली और महा सुख की देने वाली होगी। क्योंकि जिस क़दर सुख और आनन्द हैं, वह सब रूह यानी सुरत की धार के वसीले से मिलते हैं। और इसी तरह जिस क़दर कि ज्ञान और इल्म और समझ-बूझ और ताक़त और क़ुव्वतें हैं, वह भी सब सुरत की धार के सबब से ज़ाहिर होती हैं। और देह का मसाला जो है, वह जड़ है, और सुरत की धार के सबब से चैतन्य नज़र आता है। और ऊंचे दरजों में यह मसाला निहायत लतीफ़ दर लतीफ़ होता गया है। और जिस क़दर लतीफ़ यानी सूक्ष्म मसाला है, उसी क़दर उससे जो रूप यानी सूरत या देह बनी हैं, वह भी लतीफ़ और ज़्यादा देर ठहरने वाली हैं। फिर जिस दरजे में कि यह मसाला बहुत से बहुत सूक्ष्म और लतीफ़ है या बिल्कुल मौजूद नहीं है, सिर्फ़ सुरत यानी चैतन्य ही का मंडल यानी भंडार वहाँ है, तो वह भंडार ज़रूर महा रस और महा आनन्द और महा ज्ञान का महा मंडल और ख़जाना होगा। और वहाँ की रचना भी ज़रूर अविनाशी होगी, क्योंकि चैतन्य का नाश

नहीं है। और मसाले का भी असल में नाश नहीं है, सिर्फ़ सूरत बदल जाती है। फिर वह मसाला अपनी हद्द में क़ायम रहेगा और चैतन्य अपनी निर्मल हद्द में हमेशा कायम रहेगा, यानी जहाँ कि मसाला बिल्कुल नहीं है, सिर्फ़ चैतन्य ही चैतन्य है, और जहाँ कि मसाले की हद्द है, वहाँ भी चैतन्य मौजूद रहेगा, मगर उसके साथ मिला हुआ, क्योंकि बिदून चैतन्य के किसी जगह रचना नहीं हो सकती, और न ठहर सकती है। और चैतन्य से कोई जगह ख़ाली नहीं है। जब यह बात समझ में आ गई तो सिर्फ़ इस हाल का दरियाफ़्त करना भेदी गुरु से अब बाक़ी रह गया कि किस तरह उस ऊँचे देश में अपनी सुरत पहुँच सकती है यानी कौन तरकीब के साथ और किस रास्ते से गुज़र कर सकती है।

१०—अब समझना चाहिए कि राधास्वामी अथवा संत मत में सिर्फ़ यही हाल बयान किया है। यानी संत मत चैतन्य के निज भंडार का, जो कि कुल्ल का मालिक है, पता देता है। और उस रास्ते का कि जहाँ होकर सुरत (जो कि उस कुल्ल मालिक सूरज रूप की किरन है या सिंध रूप की बूँद है) नीचे की तरफ़ इस पिंड में उतरी है और जिस तरकीब से कि यह अब फिर उसी रास्ते से उलट कर चढ़ जावे, भेद बताता है। और सच्चे खोजी और ग़ौर और विचार करने वाले को यही बात दरियाफ़्त करनी

बाक़ी रहती है। फिर जब ऐसा खोजी सच्चे गुरु के सन्मुख आकर यह हाल उनके मुख से सुनेगा तो फ़ौरन उसको इस क़दर समझ और पहिचान हो जावेगी कि मेरा कारज इन्हीं के हाथ से बन सकता है।

११—अब फिर ग़ौर करना चाहिए कि जो कोई ऐसा खोजी है, वह अपने हाल को देख कर यह भी परख करेगा कि देह रूप मेरा नहीं है। क्योंकि जब नींद आ जाती है, तब देह और दुनिया की ख़बर नहीं रहती और मन और इन्द्रियाँ बाहरमुख कार्रवाई नहीं कर सकती हैं, और देह और दुनिया के दुख सुख की भी ख़बर नहीं पड़ती है, और न किसी में मन का बन्धन उस वक़्त रहता है। तो इससे साफ़ ज़ाहिर हुआ कि असली मुक्ति (जो कि देह के बन्धनों और दुख-सुख और जनम-मरन से छूटने का नाम है) इसी रास्ते यानी आँखों के अन्दर होकर ऊँचे की तरफ़ चढ़ने और चलने से यानी पुतली को उलटाने और अंतर में ऊपर की तरफ चलाने से हासिल होगी। और साफ आँख से दिखलाई देता है कि जब आदमी को ग़श आता है या किसी क़िस्म की बीमारी में बेहोशी होती है या जब मौत का वक़्त क़रीब आता है, तो उस वक़्त आँख की पुतली का अन्दर और ऊपर की तरफ किसी क़दर खिंचना शुरू होता है, तो मरने के वक़्त शरीर छोड़ कर जाने का रास्ता इसी तरफ़ से हुआ।

१२—अब मालूम होवे कि राधास्वामी मत में यही अभ्यास जारी है कि आहिस्ता २ ध्यान और भजन यानी अंतर अभ्यास करके पुतली को उलटाना और घट में सुरत और दृष्टि को मुक़ाम वार चढ़ाना, और सब स्थानों को तै करके, ऊँचे से ऊँचे और सबके अख़ीर के स्थान में, जो कुल्ल मालिक का धाम और निर्मल चैतन्य का भंडार है, और जहाँ माया के मसाले का नाम और निशान भी नहीं है, पहुँचा कर विश्राम देना। वही स्थान परम और अमर आनंद का है और वहीं पहुँच कर सुरत पहुँचने वाली अमर और अजर हो जाती है और परम सुख को प्राप्त होती है।

१३—फिर ऐसे खोजी को जब यह बात मालूम हुई, तब वह निहायत मगन होगा कि जो बात उसने अपने ग़ौर और विचार और समझ से निकाली, वही सच्ची और क़ुदरती बात साबित हुई। यानी संतों ने, जो निज घर के भेदी हैं, वही रास्ता जो क़ुदरत ने वास्ते उतार और चढ़ाव सुरत के बनाया है, तजवीज़ किया और उसका भेद तफ़सील के साथ बतलाते हैं।

१४—अब ऐसे खोजी को किसी की गवाही और तसदीक़ की बिलकुल ज़रूरत नहीं रही, क्योंकि जो हाल और कैफ़ियत है, वह उस पर रोजमर्रा, जाग्रत और नींद की

हालत में गुज़र रही है। और इस वास्ते सिवाय इसके दूसरा रास्ता घर जाने का निश्चय करके नहीं हो सकता है।

१५—अब जो तरकीब कि संतों ने घर की तरफ़ चलने की बताई है, वह यह है कि जिस धार पर कि सुरत उतरी है उसी धार पर सवार होकर उलट जावे। और वही धार जान की धार और नूर की धार और शब्द की धार है। और शब्द के बराबर कोई रास्ता दिखाने वाला और जहाँ से कि आवाज़ आती है, वहाँ पहुँचाने वाला नहीं है। इस वास्ते शब्द को पकड़ के घर की तरफ़ चलना चाहिए और शब्द से मतलब निरी आवाज़ से नहीं है, बल्कि चैतन्य की धार से है। और वही चैतन्य की आदि धार कुल्ल रचना की कर्त्ता है। और इसी सबब से सब मतों में शब्द की महिमा और शब्द को कर्त्ता कहा है, और यह बात सब मतों से मुताबिक़ भी हो गई। पर उस शब्द का भेद किसी मत में नहीं पाया जाता है। सो उसको तफ़सील के साथ संत बताते हैं, और राधास्वामी दयाल ने निहायत खोल कर उसका बयान किया है और सहज तरकीब चलने की जारी फ़रमाई है। अब सच्चे खोजी को ऐसे गुरु पर, जो यह सब भेद बतावें, ज़रूर पूरा एतक़ाद इस क़दर आना चाहिए कि इनकी मदद से और जो जुक्ति कि वे बतावें, उसके अभ्यास से, ज़रूर उसका काम पूरा बन जावेगा यानी सच्चे मालिक के दरबार में पहुँचकर

सच्ची मुक्ति प्राप्त होगी और सच्चा और पूरा उद्धार उसका हो जावेगा यानी परम आनन्द को प्राप्त होगा।

१६–और जो उस खोजी को ऐसा यक़ीन नहीं आया तो जानो कि वह दरदी-खोजी नहीं है, सिर्फ़ बाचक-खोजी है कि बातें सुनने और समझने का शौक़ रखता है, पर मन और इन्द्रियों को रोक कर अभ्यास करने की ताक़त नहीं रखता। ऐसे खोजी को हिरसी कहते हैं, और हिरसी का उद्धार नहीं हो सकता, क्योंकि सच्चा मालिक सच्चे को पसन्द करता है, हिरसी और कपटी को उसके दरबार में दख़ल नहीं मिल सकता है। सबब यह है कि हिरसी और कपटी का झुकाव हमेशा मन और इन्द्रियों और उनके भोगों की तरफ़ रहता है, और इस वास्ते उन के मन और सुरत की धार बाहरमुख जारी होकर बिखरी रहती है, और दुरुस्ती से अभ्यास करने के वास्ते उस धार का रुख़ ऊपर की तरफ़ अंतर में फिरना चाहिये। यह दोनों बात आपस में उल्टी यानी बर-ख़िलाफ़ हैं। इस वास्ते हिरसी-कपटी जो बाहरमुख पदार्थों और भोगों में लिपट रहा है, अपने मन और सुरत को घट में अंतर और ऊपर की तरफ़ नहीं उलटा सकता है और इस सबब से वह कभी सच्चा परमार्थी और अभ्यासी भी नहीं हो सकता है, और न मुक्ति और उद्धार के लायक़ समझा जा सकता है, और न उसको सच्चे गुरु की पहिचान आवेगी

और न उनके साथ वह प्रीत करेगा। बल्कि ऐसा ख़ौफ़ खा कर कि उनके संग से उसके दुनिया के मज़ों का भोग जाता न रहे, उनके सतसंग से हट जावेगा, और कोई न कोई टेक या अपनी ओछी बुद्धि की बात बना कर संत मत के सत्य मत होने में शक पैदा करके संत सतगुरु की दया से महरूम और अभागी रह जावेगा।

१७—अब मालूम होना चाहिये कि दुनिया में दुनियादार बहुत हैं और परमार्थ के खोजी बहुत कम। और जो खोजी भी हैं, उन में दर्दी-प्रेमी बहुत कम से कम हैं और संत मत के लायक सिर्फ़ वही जीव हैं जो सच्चे खोजी दर्दी हैं। और बाक़ी जितने हैं, वे सब व्यवहारी और संसारी हैं, और संसार के भोग और पदार्थों को छोड़ना नहीं चाहते। लेकिन इसका फल और नतीजा उनको सख़्त तकलीफ़ या मौत के वक़्त मालूम होवेगा, अभी तो ग़फ़लत और भूल में पड़े हुए सच्चे परमार्थ से बे-परवाही करते हैं।

१८—जो सच्चे खोजी-दर्दी हैं, वे थोड़ी-बहुत सच्चे गुरु की पहिचान करके जैसा कि ऊपर लिखा गया, अभ्यास में लग जावेंगे। फिर जिस क़दर कि उनका अभ्यास घट में बढ़ता जावेगा, उसी क़दर उनको कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया और सतगुरु की गति की ख़बर पड़ती जावेगी, यानी उनको ऊँचे से ऊँचे दरजे का हाल मालूम होता जावेगा, तब उसी क़दर वह उनके

चरनों में दीन और अधीन होता जावेगा, और उमंग कर तन, मन, और धन से सेवा करेगा, और प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में बढ़ती जावेगी, और उस के साथ अंतर अभ्यास में भी तरक़्क़ी होती जावेगी।

१६—खुलासा यह है कि जब तक किसी के मन में सच्चा खोज और दर्द परमार्थ का नहीं होवेगा और संसार से, उसका हाल देख कर, किसी क़दर बैराग चित्त में नहीं आवेगा, तब तक वह संत सतगुरु के सतसंग के लायक़ नहीं हो सकता। और न उस को सच्चे गुरु में भाव और प्यार आवेगा और न राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत आवेगी, और न राधास्वामी मत की महिमा और बड़ाई उसकी समझ में आवेगी। और चाहे कोई दूसरे प्रेमी लोगों को देख कर सतसंग में शामिल भी हो जावे, पर उससे संगत में ठहरा नहीं जावेगा। यानी मत में शामिल नाम के वास्ते रहेगा, पर अभ्यास (चाहे उपदेश भी ले लेवे) उससे दुरुस्ती से नहीं बनेगा। और इस सबब से प्रतीत भी उसको नहीं आवेगी, और न सच्ची प्रीत उसके हिरदे में जागेगी।

भाग दूसरा

२०—संत मत में सतगुरु उनको कहते हैं जो कि धुर स्थान तक पहुँचे। और साधगुरु वह हैं जो पारब्रह्म पद तक पहुँचे। और इस वास्ते सतगुरु को सत्तपुरुष

समान, और साधगुरु को पारब्रह्म समान मानते हैं। पर इस तरह की समझ हर कोई धारन नहीं कर सकता है, जब तक कि वह कोई दिन सतसंग और अभ्यास सुरत-शब्द मारग का न करे और अपने अंतर में परचा न पावे।

२१—इस वास्ते शुरू में जिस किसी की समझ में संत मत अच्छी तरह से आ जावे, उसको इस क़दर समझ धारना कि गुरु बड़े और बुज़ुर्ग और सब तरह से सच्चे परमार्थ की कार्रवाई में मदद देने वाले हैं, काफ़ी होगा। पर कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रतीत और प्रीत, अपनी समझ-बूझ के लायक़, ज़रूर लाना चाहिए कि जिससे अभ्यास और सतसंग सच्ची लगन के के साथ बनते जावें।

२२—जब इस रीत से जो कोई सचौटी और शौक़ के साथ सतसंग और अभ्यास शुरू करेगा, तो उस को आहिस्ता २ ज़रूर अपने अंतर में अभ्यास का रस थोड़ा-बहुत आता जावेगा। और गुरु का कोई दिन संग करके उनकी रहनी भी समझ में आवेगी, और उनके बचनों की भी परख और पहिचान होती जावेगी, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया के भी परचे अंतर में मिलते जावेंगे।

२३—इसी हालत के साथ ऐसे परमार्थी की प्रतीत और प्रीत, चरनों में, राधास्वामी दयाल और भी गुरु के,

दिन २ बढ़ती जावेगी, और गुप्त भेद संत मत और उसके अभ्यास का आहिस्ता २ खुलता जावेगा, और अंतर में आनंद और शान्ति आती जावेगी।

२४—संत मत में मुख्यता प्रेम की है। जो हिरदे में सच्चा प्रेम और शौक़ होगा तो परमार्थी कार्रवाई यानी अभ्यास और सतसंग आसानी से बनता जावेगा। और जिस क़दर राधास्वामी दयाल और गुरु के चरनों में प्यार आता जावेगा, उसी क़दर अभ्यास में तरक़्क़ी होती जावेगी।

२५—जितने काम स्वार्थ या परमार्थ के हैं, वे सब बिना सच्ची चाह या शौक़ के, नहीं बन सकते। और न बिना प्यार और प्रीत के कोई किसी से मिल सकता है, और न आपस में मुहब्बत के साथ संग कर सकता है। खुलासा यह कि प्रीत यानी कशिश यानी खिंचाव-शक्ति, कुल्ल रचना की कार्रवाई की जान है। बग़ैर प्रीत या कशिश परमाणु के, किसी चीज़ का रूप नहीं बन सकता, और न ठहर सकता है, और न किसी क़िस्म की कार्रवाई रचना की जारी हो सकती है, और न क़ायम रह सकती है।

२६—गहरी प्रीत राधास्वामी दयाल के चरनों में आना चाहिए, तब मेला होवे। लेकिन जो कि उन के स्वरूप का, जैसा कुछ कि है, दर्शन नहीं हुआ, इस सबब से गहरी प्रीत उनके चरनों में नहीं आ सकती। पर गुरु

के चरनों में किसी क़दर मोहब्बत पैदा हो सकती है। यानी जिस क़दर कि अभ्यासी ने सतसंग और अभ्यास करके उनकी और उनके शब्द की महिमा समझी और अंतर में परखी है, उसी क़दर उसको, उनमें और राधास्वामी दयाल और उनके शब्द में प्रीत और प्रतीत पकती और बढ़ती जावेगी। और यही प्रीत अंतर अभ्यास में मदद देती जावेगी। और आहिस्ता २ एक दिन अभ्यासी का भाव और प्यार और विश्वास राधास्वामी दयाल और गुरु स्वरूप के चरनों में पूरा २ जैसा कि चाहिए, आ जावेगा, और तब काम भी पूरा हो जावेगा।

२७—गुरु में सत्तपुरुष सम भाव लाने में बड़े विघ्न मन में पैदा होते हैं। पहिले तो यह उनको मनुष्य स्वरूप देखता है। दूसरे, उनकी देह हड्-दार दिखलाई देती है। फिर सत्तपुरुष समान उनको सर्वत्र और सर्वज्ञ कैसे माने ? तीसरे, जब यह चाहे और जिस तरह इसकी ख़्वाहिश होवे, उसके मुवाफ़िक़ कोई कार्रवाई क़ुदरती क़ायदे के मुवाफ़िक़ या बर-ख़िलाफ़ उनसे नहीं करा सकता है। अपनी मौज और दया से वे चाहे जो कुछ करें और चाहे जैसे परचे इसको अंतर और बाहर इसकी माँग और चाह से ज़्यादा-तर दिखलावें, पर जो परीक्षा के तौर पर कोई उनकी गति और ताक़त को परखा चाहे, तो वे चाहे पूरे गुरु होवें, कभी अपने आप को ऐसे जीवों पर ज़ाहिर नहीं करते

हैं। क्योंकि करामात दिखा कर जीवों को परमार्थ में लगाना मंजूर नहीं है और न उसमें जीवों का फ़ायदा है। बल्कि करामात देखने वालों की प्रीत और प्रतीत का बिल्कुल ऐतबार नहीं हो सकता है। और ऐसे लोग संसारी होते हैं, और अपनी संसार की टेक कभी नहीं छोड़ेंगे। चौथे, जो कोई पूरे गुरु की परख और पहिचान उन लक्षणों के मुवाफ़िक़ करना चाहे, जो पुरानी किताबों में लिखे हैं, तो वह धोखा खावेगा, क्योंकि उनकी क्या ताक़त कि अपनी काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार की सनी हुई बुद्धि से उनकी रहनी की परख करे? सिवाय इसके, वास्ते सम्हाल और गढ़त जीवों के, वे जब २ मुनासिब समझते हैं, क्रोध और लोभ और अहंकार के स्वरूप में भी ज़रूरत के मुवाफ़िक़ बर्ताव करेंगे। लेकिन उनका ऐसा बर्ताव सब देखने मात्र होगा, अंतर में नहीं बिधेगा। पर संसारी जीवों की क्या ताक़त है कि वे ऊपरी और अंतरी बर्ताव में फ़र्क़ कर सकें? इस वास्ते ऐसे जीव हमेशा डिगमिग रहेंगे और कभी उनकी प्रतीत गुरु चरनों में नहीं पकेगी। पाँचवें, ऐसे जीव गुरु के बचनों को अपनी विद्या और बुद्धि की समझ के साथ मिलावेंगे या विद्यावानों के क़ौलों से उनकी जाँच करेंगे। सो यह बात भी ना-मुमकिन होगी, क्योंकि विद्या और बुद्धि वाले अटकल से बातें बनाते हैं, और इस लोक की ज़ाहिरी क़ुदरत की कार्रवाई के

मुवाफ़िक़ आसमानी बातों की तौल और जाँच करते हैं। गुप्त क़ुदरत और उसके भेद को न तो हिरदे की आँखों से देखा और न किसी ऐसे देखे हुए से सुना न समझा। फिर उनके बचनों से संतों के बचनों को मिलाना, या मुक़ाबला करना, किस क़दर नादानी और कम फ़हमी की बात है ? और ऐसा मेल कभी नहीं होगा और इस वास्ते इस क़िस्म के जीवों के मन में कभी पूरे गुरु की प्रतीत नहीं आवेगी, बल्कि अपनी विद्या और बुद्धि के अहंकार में ऐसा ख़्याल करेंगे कि इनका मत मूर्खों के वास्ते है। और जो विद्यावानों को उसमें शामिल होते देखेंगे तो उनको भी नादान समझेंगे, या यह कि उनकी अक़्ल में ख़लल आ गया है या उन पर जादू और मंतर का असर पैदा किया गया है। छठे, यह कि जिन जीवों के मन में मान और अहंकार भरा हुआ है और सच्ची चाह परमार्थ की नहीं है, वह पूरे गुरु की निस्बत इस क़िस्म के ख़्याल करेंगे कि अपनी मान और बड़ाई और पुजाने और आमदनी पैदा करने के लिये नया मत जारी किया है और उनकी गति की परख ज़रा नहीं आवेगी। इतना भी ग़ौर नहीं करेंगे कि जो उनके मान और बड़ाई की चाह होती और अपने मत को कसरत से फैलाने का इरादा होता तो वे कोई २ चाल इस क़िस्म की क्यों जारी करते कि जिससे संसारी जीव उन के सतसंग से डर कर दूर

भागें और उनके नज़दीक और सन्मुख भी न आवें ? जो ऐसी चाह होती तो वह पाखंडियों के मुवाफ़िक़ ऐसी चाल चलते कि दुनियादार खुश होकर उनके मत और पूजा में शामिल होते। पर वे सच्चे हैं। और सच्चे मालिक के सच्चे मत का उपदेश करते हैं। चाहे दुनियादार राज़ी होवें या नाराज़, वे हमेशा सच्ची बात कहेंगे और सच्चे मत की सच्ची चाल चलावेंगे और वे जीवों से उनके हित और कल्यान के वास्ते प्रीत करने में अपना ज़ाती मतलब कोई नहीं रखते। सातवें, संसारी जीव हमेशा अपनी ख़ातिरदारी और मान और आदर चाहते हैं और अहंकार करके सतसंग और सेवा में वहाँ के क़ायदों के मुवाफ़िक़ शामिल होना नहीं चाहते, और जो ऐसा करते हैं उन पर तान मारते हैं और पूरे गुरु की निस्बत इल्ज़ाम लगाते हैं कि वे अपने सेवकों को ऐसी कार्रवाई से क्यों नहीं रोकते ? लेकिन वे किस तरह असल परमार्थ के क़ायदे और कार्रवाई को बदल सकते हैं और सेवकों का अकाज किस तरह रवा रख सकते हैं ? इस सबब से संसारी जीव, जो सतसंग में शामिल भी हो गये हैं, अपने मन में पूरे गुरु और उनके प्रेमी सतसंगियों के निंदक बने रहते हैं, और संसारियों में जाकर तरह २ की निंदा अपनी नादानी और अहंकारी अंग के मुवाफ़िक़ करते हैं। इन जीवों को भी प्रीत और प्रतीत गुरु चरन

में नहीं आवेगी और इस वास्ते राधास्वामी दयाल और उनके शब्द में भी इनका भाव और प्यार डावाँडोल रहेगा।

२८—जो कोई सच्चा खोजी और दर्दी है, वह कभी ऐसे ख़याल और बर्ताव जिनका ज़िकर ऊपर की दफ़ा में लिखा गया, निस्बत सतगुरु और उनके सतसंग के, कभी नहीं करेगा, और अपना मतलब सच्चे परमार्थ के हासिल करने का पेश-ए-नज़र (सनमुख) रख कर जो २ कार्रवाई कि संतों ने अंतरी और बाहरी, वास्ते गढ़त मन और इन्द्रिय और स्वभाव के, जारी फ़रमाई हैं, उनको बहुत ख़ुशी के साथ मानेगा और उमंग के साथ उनके मुवाफ़िक़ काम करेगा, और संसारियों का, जो असली परमार्थ से बे-ख़बर हैं, भय और शरम अपने मन में नहीं लावेगा, और अपने मन और इन्द्रियों को थोड़ा बहुत ज़ोर देकर रोकेगा, और सच्चे तौर पर परमार्थ की कार्रवाई में लगावेगा। और फिर वही सतगुरु और राधास्वामी दयाल की दया का भागी होकर अपने अंतर और बाहर उनकी मेहर और रक्षा के परचे हर रोज़ देख कर उनके, चरनों में गहरी से गहरी प्रीत और प्रतीत करके, अपना जनम सुफल करेगा, यानी जीते जी अपने उद्धार की कैफ़ियत देख कर शान्ति और आनन्द को प्राप्त होगा।

———

बचन १५

राधास्वामी मत संदेश

जो लोग कि सच्चे खोजी सत्त पद के हैं, और अपने जीव के पूरे और सच्चे उद्धार के वास्ते दर्द के साथ सच्ची ख़्वाहिश रखते हैं, यानी सच्चे परमार्थी हैं, और दुनिया की तरफ़ से उनके दिल में किसी क़दर उदासीनता है, उनके वास्ते सत्त मत का भेद इस बचन में कहा जाता है

१–राधास्वामी मत क्या है ?

१—राधास्वामी मत को संत मत कहते हैं और यही मत सत्त मत है, यानी सत्त पद को लखाता है और उसका भेद समझाता है।

२–राधास्वामी नाम की सिफ़त

२—राधास्वामी नाम कुल्ल और सच्चे मालिक का नाम है जो ईश्वर परमेश्वर और ब्रह्म, पारब्रह्म और आत्मा, परमात्मा और खुदा और निर्वाण पद सब का निज कर्त्ता है।

३–यह नाम किसी का धरा हुआ नहीं है। इसको कुल्ल मालिक ने मेहर और दया से आप प्रकट किया। यानी यह नाम ऊँचे देश में बग़ैर मदद ज़बान या बाजे के बोल रहा है। और उस धुन को बड़-भागी अभ्यासी अपने घट में सुनते हैं।

४–जो कोई इस नाम को उसके नामी और धाम और वहाँ पहुँचने के रास्ते का भेद लेकर, प्रेम के साथ गावेगा, या उसका सुमिरन या ध्यान करेगा, या चित्त लगा कर उसकी धुन को अंतर में सुनेगा, वही कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया और सतगुरु की कृपा से भव-सागर के पार जावेगा, और परम आनंद को प्राप्त हो कर, काल के क्लेश और जनम-मरन के दुक्खों से बच जावेगा।

३–अर्थ राधास्वामी नाम के

५–"राधा" नाम "आदि सुरत" यानी "आदि धुन" का है, जो "आदि शब्द" से प्रकट हुई, और "स्वामी" नाम कुल्ल मालिक यानी "आदि शब्द" का है।

६–शब्द यानी आवाज़ प्रथम ज़हूर यानी प्रकाश कुल्ल का है और यही सब रचना का करता है।

७–या इस तरह समझो कि "राधा" यानी धुन उस चैतन्य धार का नाम है जो अनामी पुरुष "स्वामी" से आदि में प्रकट हुई, और उसी को आदि सुरत कहते हैं। और "स्वामी" नाम उस पुरुष यानी कुल्ल मालिक का है जो अकह

और अपार और अनंत और अगाध और अनाम है, और जिसके चरनों से धारा यानी धुन आदि में प्रकट हुई।

८–आदि धारा यानी धुन अथवा "आदि सुरत" कुल्ल रचना की कर्त्ता है। और इस वास्ते वही कुल्ल रचना की माता है। और स्वामी यानी "आदि शब्द" कुल्ल रचना का पिता है।

९–जब यह धुन या धारा उलट कर स्वामी या शब्द की तरफ़ मुतवज्जह होवे, तब इस धारा का नाम राधा और आशिक यानी प्रेमी और भक्त है, और शब्द यानी स्वामी प्रीतम और माशूक़ है।

१०–जब तक कि यह धारा या धुन जारी है, तब तक वह और शब्द दो समझे जाते हैं। और जब कि वह धारा उलट कर शब्द यानी स्वामी में समा जावे, तब एक हो गये यानी दो का फ़र्क़ जाता रहा।

४–खुलासा हाल रचना का

११–जो धारा कि आदि में प्रकट हुई, वह उतर कर किसी क़दर फ़ासले पर ठहरी और वहाँ उसने मंडल बाँध कर रचना करी। इस स्थान का नाम अगम लोक है। और जो धारा कि वहाँ आकर ठहरी, उसका नाम अगम पुरुष है, यानी राधास्वामी दयाल के तख़्त का स्थान है।

१२—जब अगम लोक की रचना हो गई, तब वहाँ से भी धारा प्रकट होकर नीचे उतरी, और किसी क़दर फ़ासले पर ठहर कर, और वहाँ मंडल बाँध कर, उसने रचना करी। इसका नाम अलख लोक है, और उस धारा का नाम अलख पुरुष है।

१३—अलख पुरुष से भी धारा प्रकट होकर और पहिले दस्तूर के मुवाफ़िक़ नीचे उतर कर जहाँ ठहरी, और उसने मंडल बाँध कर रचना करी, उसका नाम सत्त पुरुष और सत्तलोक है।

१४—यहाँ तक निर्मल चैतन्य यानी रूहानी रचना हुई, और राधास्वामी दयाल आप इन स्थानों में व्यापक और मौजूद हैं। यहाँ काल, क्लेश और दुक्ख और दर्द और जनम-मरन नहीं है। यह सब स्थान दयाल देश या संत देश या निर्मल चैतन्य के देश कहलाते हैं। यहाँ का प्रकाश सेत रंग का है।

१५—बहुत अरसे तक इसी क़दर रचना होकर रह गई और यहाँ की बासी सुरतें हंस कहलाती हैं। और अनंत दीप रूहानी इन लोगों के गिर्द में पैदा किये गये। उनमें हंस रहते हैं और अमी का अहार और पुरुष के दर्शन का बिलास करते हैं।

१६—ऊपर जो धारा का ज़िक्र लिखा गया है, वह धारा निहायत सूक्ष्म है कि किसी तरह नज़र नहीं आ

सकती और न कुछ उसका आकार मालूम हो सकता है, जैसे चुम्बक पत्थर को जब लोहे के छोटे २ टुकड़ों के सामने लाओ तो वह लोहे के टुकड़ों को अपनी धार के वसीले से खींचता है, पर वह धारा उससे निकलती हुई बिलकुल मालूम नहीं होती है। यह दृष्टान्त भी सर्व-अंग करके दुरुस्त नहीं है, लेकिन सिर्फ़ धारा की सूक्ष्मता समझाने के लिये दिया गया है।

१७–सत्त लोक के मंडल के नीचे जो चैतन्य था, वह श्याम रंग के ग़ुबार के ढका हुआ था, और जिस क़दर कि सत्तलोक से दूरी होती गई, वह ग़ुबार भी बढ़ता गया, जैसे किसी चीज़ पर तह पै तह चढ़ी हुई होती है।

१८–सत्तलोक के नीचे से श्याम धारा भूरे रंग की प्रकट हुई और यह धारा भी चैतन्य थी जैसे कि ऊपर के लोकों की धारा चैतन्य है। इस धारा ने सत्त पुरुष से बिनती करके आज्ञा माँगी कि सत्तलोक के मुवाफ़िक़ रचना करे। तब उसको हुक्म हुआ कि नीचे के देश में जाकर रचना करे। इस धारा का नाम निरंजन यानी काल-पुरुष है, और नीचे उतर कर यानी ब्रह्माण्ड में, इसी का नाम पारब्रह्म और ब्रह्म हुआ।

१९–यह श्याम धारा नीचे उतरी, पर वह मंडल बाँध कर जैसे ऊपर की धाराओं ने रचना करी, ऐसी रचना न कर सकी। तब उसने सत्तपुरुष से फिर बिनती

करके मदद माँगी। तब सत्तलोक से दूसरी धारा ज़र्द रंग की प्रकट करके नीचे उतारी गई। यह धारा सुरतों का भंडार लिये हुए आई, और फिर इसने और पहली श्याम धारा ने मिल कर नीचे के देश में रचना करी। इस धारा का नाम जोत और आद्या है, और नीचे के देश यानी ब्रह्माण्ड में इसी का नाम माया हुआ।

२०–पहिले इन दोनों धारों ने ब्रह्माण्ड की रचना करी यानी ब्रह्म सृष्टि करी। इस देश में गुबार किसी क़दर साफ़ और सूक्ष्म था, इस सबब से यहाँ की रचना भी सूक्ष्म हुई।

२१–सत्तलोक के नीचे एक स्थान यानी लोक रचा गया कि जिसको दयाल देश का द्वारा समझना चाहिये। और उसके नीचे एक भारी मैदान है, जिसको महासुन्न कहते हैं, और वह दयाल देश और ब्रह्माण्ड यानी ब्रह्म और माया देश के बीच में हद्द के तौर पर है।

२२–फिर इसके नीचे तीन स्थान निरंजन और जोत ने रचे, जो ब्रह्माण्ड की हद्द में शामिल हैं। नीचे के स्थान को सहसदलकँवल कहते हैं और जहां निरंजन और जोति का स्वरूप प्रकट है। और यही स्थान सब मतों का, जो दुनिया में जारी हैं, सिद्धान्त पद है। यानी इसके ऊपर का हाल किसी मत की किताबों में नहीं लिखा है। सिर्फ़ जोगीश्वर ज्ञानी ब्रह्माण्ड की चोटी तक यानी सहसदलकँवल

के ऊपर दो मुक़ाम तक गये, पर वहाँ का भेद उन्होंने गुप्त रक्खा, कहीं २ इशारे में वर्णन किया। लेकिन ब्रह्माण्ड के परे कोई नहीं गया, सिवाय संत सतगुरु के, जो कि सत्तलोक से आये और कुल्ल रचना के भेद से आपही वाक़िफ़ थे।

२३–सहसदलकँवल से तीन धारें–सत, रज, तम जिनको गुन और भी ब्रह्मा, विष्णु और महादेव कहते हैं, पैदा हुईं। और इन धारों ने नीचे के देश की रचना करी जिसको पिंड कहते हैं, और जिसमें छः चक्र शामिल हैं।

२४–इस रचना में देवता और मनुष्य और पशु औरबाक़ी कुल्ल रचना चारों खान की शामिल है। यहाँ ग़ुबार भारी था यानी स्थूल माया थी। इस सबब से यहाँ की रचना भी स्थूल हुई।

२५–चार खानों के नाम यह हैं। (१) जेरज जो झिल्ली में लिपटे हुए पैदा होवें। (२) अंडज जो अंडे से पैदा होवें। (३) स्वेदज जो पानी और पसीने से पैदा होवें। (४) उद्भिज जो ज़मीन से पैदा होवें, जैसे दरख़्त, वनस्पति वग़ैरा, और भी जो खान से पैदा होवें।

२६–इस दरजे में सूक्ष्म और स्थूल शरीर के साथ पाँच दूत (१) काम (२) क्रोध (३) लोभ (४) मोह और (५) अहंकार, और चार अंतःकरण (१) मन (२) चित्त (३) बुद्धि (४) अहंकार, और दस इंद्रिय यानी

पाँच ज्ञान इन्द्रिय (१) आँख (२) कान (३) नाक (४) ज़बान रस लेने वाली और (५) त्वचा यानी खाल, और पाँच करम इन्द्रिय (१) हाथ (२) पाँव (३) ज़बान बोलने वाली (४) पेशाब की और (५) पाख़ाने की इन्द्रिय, बतौर औज़ारों के, वास्ते कार्रवाई उन शरीरों के, सूक्ष्म और स्थूल रचना के लोकों में शामिल हुए।

२७–और इन लोकों में यानी सूक्ष्म और स्थूल लोक में, माया ने अनेक तरह के भोग इन सब इन्द्रियों के पैदा किये, और उन भोगों से मन और इन्द्रिय अपना भोग-बिलास कर रहे हैं।

२८–सुरत की धार जो ऊँचे देश से आई, वह पहिले मन को चैतन्य करती है, और मन के स्थान से जो धार सुरत और मन की मिलौनी से उठती है, वह इन्द्रियों को चैतन्य करती है। और इन इन्द्रियों के द्वारे वही धार भोगों और पदार्थों में शामिल हो कर उनका रस उन्हीं इन्द्रियों के वसीले से मन को देती है। यह कार्रवाई स्थूल देह में बैठ कर, सुरत और मन, इन्द्रियों के वसीले से इस देश में कर रहे हैं।

५–वर्णन जौहर सुरत और मन, और उनके स्थान का, पिंड में

२९–अब समझना चाहिये कि सुरत की धार दयाल

देश से आई और वह सत्तपुरुष राधास्वामी की अंस है। अंस के अर्थ टुकड़े के नहीं है। अंस कहने से सिर्फ़ यह मतलब है कि सुरत वही जौहर है जो कुल्ल मालिक का जौहर है। और वह कुल्ल मालिक सब जगह मौजूद है, पर एक देश में प्रकट और बे-परदे, और बाक़ी देश में गुप्त यानी परदे या तय से ढका हुआ। और यह परदे या तह, जिस क़दर कि प्रकट देश से दूरी होती गई, बढ़ते गये, जैसे कि प्याज़ के ऊपर या केले के दरख़्त पर तह पै तह चढ़ी होती हैं। और हर एक अंदरी तह या परदा बाहर की तह या परदे से मुलायम और साफ़ और सूक्ष्म होता है। इसी तरह यह तह या परदे, गुबार यानी माया के, उस चैतन्य पर चढ़े हुए हैं। और पहिला परदा या तह निहायत लतीफ़ और सूक्ष्म, और दूसरा उससे कम लतीफ़, और तीसरा उससे कम लतीफ़ है। ऐसे ही स्थूल माया के देश में स्थूल यानी मोटी तह या परदे हैं, और सुरत उनके अंदर गुप्त है।

३०—और प्रकट और गुप्त का हाल थोड़ा-बहुत इस दृष्टान्त से समझ में आवेगा—जैसे कि इस लोक में पानी एक देश यानी समुद्र में प्रकट है और बाक़ी देशों में यानी ज़मीन पर गुप्त है, यानी तह या परदों से ढका हुआ है। कहीं वह तह या परदा चार-पाँच हाथ मोटा, कहीं दस-बीस हाथ, कहीं चालीस-पचास हाथ और कहीं इससे भी ज़्यादा।

मगर पानी हर जगह मौजूद है, और बग़ैर परदे या तह के हटाये उसका दर्शन या उससे कुछ कार्रवाई मुमकिन नहीं है।

३१–दूसरी धार निरंजन से (जिसका स्थान ब्रह्माण्ड में है और वह नीचे के देश में भी व्यापक है) निकली, और इसका नाम मन हुआ। और मन उसको कहते हैं कि जिसमें फ़ुरना होवे यानी तरंग और ख़्याल उठे। यह नीचे के देश में दरजे-बदरजे स्थूल होता गया और यही इन्द्रियों का प्रेरक है।

३२–तीसरी धार माया से निकली। इस माया का स्थान भी ब्रह्माण्ड में है, और वही सब नीचे के देश में मौजूद है। और यह भी दरजे-बदरजे मुवाफ़िक़ परदों के स्थूल यानी कसीफ़ होती गई। इसके मसाले से तन और इन्द्रियां वग़ैरा बनीं, और यह सुरत की शक्ति से चैतन्य हैं, जिस शक्ति की धार मन के वसीले से पिंड में फैलती है।

३३–सुरत की असली बैठक पिंड में, दरमियान दोनों आँखों के, जो अंदर की तरफ़ तिल है, उसमें है। और इसी स्थान से तमाम पिंड में फैली है और जाग्रत के वक़्त दोनों आँखों में नशिस्त है। जब सुरत की धार अंदर और ऊपर की तरफ़ खिंच जाती है, उस वक़्त देह और इन्द्रियां बेकार हो जाती हैं, यानी तमाम कार्रवाई उनकी बन्द हो जाती है।

३४–मन की बैठक, खास कर, सीने के नीचे कौड़ी के मुक़ाम पर है, और वहीं से धार इन्द्रियों में आती है, और भी तमाम देह में फैलती है। लेकिन जब तक सुरत की धार ऊपर से मन के स्थान पर न आवे, तब तक यह कुछ कार्रवाई नहीं कर सकता है।

३५–माया की धार से जो कि जगह २ स्थूल रूप हो गई, पिंड के अंग २ बने हैं, और वही कुल्ल देह में व्यापक है।

६–बयान हालत खिंचाव सुरत का

३६–जब आदमी की आंख की पुतली खिंच जाती है, वह फ़ौरन बेहोश हो जाता है, और देह बेकार हो जाती है, और मन और इन्द्रियां भी बेकार हो जाती हैं।

३७–इसी तरह जब ज़्यादा खिंचाव उस धार को हो जाता है, तब आदमी मर जाता है, और जो थोड़ा सा खिंचाव हुआ, तब बेहोश हो जाता है, या नींद आ जाती है और इस तरफ़ से ग़ाफ़िल हो जाता है।

३८–इससे साबित हुआ कि तमाम कार्रवाई बदन की, सुरत की धार के आसरे है। और इस धार का ऊपर से यानी दिमाग़ से, आंखों में और फिर तमाम देह में उतरना और फैलना, और फिर अख़ीर वक़्त पर इसी रास्ते से, यानी आंख के मुक़ाम से, अंदर और ऊपर की तरफ़

होकर चले जाना और पिंड का छोड़ना, साफ़ इन आंखों से नज़र आता है। क्योंकि मरते वक़्त पांव की उँगलियों से खिंचाव उस धार का शुरू होकर रफ़्ता २ ऊपर की तरफ़ को चलता जाता है, और जब पुतली उलट गई यानी खिंच गई, तब पिंड की मौत हो जाती है।

३९—और यह बात भी इस बयान से साबित हुई कि जब सुरत जाग्रत के वक़्त आँखों में बैठी है, उस वक़्त देह और दुनिया का दुख-सुख और चिंता और फ़िक्र व्यापता है, और जब अंदर की तरफ़ थोड़ी-बहुत खिंच गई, उस वक़्त न देह की खबर रहती है और न दुनिया की, और उनका दुख-सुख भी नहीं व्यापता है। देखो जब डाक्टर लोग शीशी सुँघाते हैं उस वक़्त सुरत यानी रूह की धार हट जाती है, फिर बदन काट डालते हैं और कुछ खबर नहीं होती। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि देह और इन्द्रियां जड़ हैं, और सुरत चैतन्य है। उसकी चैतन्यता से यह भी चैतन्य होते हैं। और जब उससे यानी सुरत से सम्बन्ध ढीला हो जाता है या टूट जाता है, उस वक़्त यह देह और इन्द्रियाँ बेकार या मुर्दा हो जाती हैं।

४०—ऊपर के बयान से ज़ाहिर होता है कि जो कोई जीते-जी संसार और देह के दुख-सुख से बचाव चाहे, तो वह ऐसी तरकीब करे कि जिससे जब चाहे तब वह अपनी सुरत को आंख के स्थान से, अंदर और ऊपर की तरफ़

जिस क़दर मुनासिब और ज़रूर समझे, खींच ले जावे। तब उसको तकलीफ़ और आराम, देह और दुनिया से बचाव हो सकता है।

७–रचना के तीन दरजों का बयान

४१–संतों ने कुल्ल रचना को तीन बड़े दरजों में तक़सीम किया है और वह तीन दरजे यह हैं।

(१) पहला दरजा–जिसमें निर्मल-चैतन्य यानी सिर्फ़ रूह का मंडल है, और वहाँ के लोक, और उन लोकों में सब रचना रूहानी यानी चैतन्य लतीफ़ है और यह मंडल दयाल अथवा संत देश कहलाता है।

(२) दूसरा दरजा– इस पहले दरजे के नीचे से जैसा कि ऊपर बयान हो चुका है, ग़ुबार यानी माया का ज़हूर हुआ। जितने रंग हैं, लाल से लगा कर नीले यानी काले रंग तक, सब मन और माया के रंग हैं। इस दरजे में सूक्ष्म यानी लतीफ़ माया निर्मल-चैतन्य को तह या ग़िलाफ़ के तौर पर ढके हुए है, यानी लतीफ़ माया की देहियाँ तैयार होकर और उनमें रूह बैठ कर उस देश में कार्रवाई करती है। यह दरजा ब्रह्माण्ड कहलाता है।

३–तीसरा दरजा—इस दरजे में निर्मल चैतन्य पर सिवाय सूक्ष्म माया के ग़िलाफ़ों के स्थूल माया की तहें

चढ़ी हुई हैं और इसी सबब से यहाँ के लोक भी कसीफ़, और उनकी रचना भी निहायत कसीफ़, यानी स्थूल है। छः चक्र पिण्ड के इसी दरजे में शामिल हैं।

८-इस लोक में सुरत की हालत और कार्रवाई का बयान और उसके निकासी का जतन

४२-हमारा यह पृथ्वी लोक तीसरे दर्जे में है, और इसी सबब से यहाँ की रचना भी स्थूल है और यहाँ सुरत यानी रूह कितने ही परदों में गुप्त है। किसी दरख़्त का बीज लेकर देखो कि कितनी तह या छिलके उस पर चढ़े हुए हैं, और फिर उनके अंदर मग़ज़ और मग़ज़ के भी किसी दरजे में उस बीज की रूह की बैठक है, जहाँ से कि वक़्त पैदाइश कुला फूटता है यानी प्रथम धार निकलती है। और इन परदों या ग़िलाफ़ या तह को शरीर या देह कहते हैं।

४३—इसी तरह आदमी की रूह भी कई परदों यानी शरीरों में गुप्त है। पहिला स्थूल शरीर, दूसरा सूक्ष्म और तीसरा कारण शरीर, और इन तीनों में हर रोज़ सुरत यानी रूह की आमद-ओ-रफ़्त रहती है।

४४—ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि यह देश सुरत यानी रूह का नहीं है, क्योंकि यह माया का देश है और यहाँ काल और माया प्रधान यानी ग़ालिब हैं, और सुरत उनके आधीन है। हरचंद कि सब कार्रवाई इस देश में

सुरत की धार की ताक़त से हो रही है, पर सुरत का मुख यहाँ नीचे और बाहर की तरफ़ हो रहा है। और इस सबब से उसकी धारें मन और माया से मिल कर जारी होती हैं, और मन और माया का असर उनमें ज़बर रहता है। इस वास्ते जीव का झुकाव संसार और उसके भोगों की तरफ़ ज़्यादा रहता है।

४५—अब जब तक कि किसी मनुष्य को, ऊपर के देश के बासी या उस तरफ़ के चलने वालों का संग न मिलेगा, और वह उन से भेद रास्ते और जुगत चलने की लेकर, इस देश और इस घाट याना स्थान को आहिस्ता २ छोड़ना शुरू न करेगा, तब तक सच्चे और पूरे तौर से मन और माया का ज़ोर कम न होगा, और न उस मनुष्य की पुरानी आदतें और स्वभाव और ख़्वाहिशें और व्यवहार, जो संसारियों का संग करके पड़ गई हैं, बदलेंगी।

४६—संग और तमाशा और तजरुबा जिस सोहबत और जिस पेशे में जो कोई कि होवे, बड़ा भारी असर रखता है। यानी जैसे आदमी की सोहबत होगी और जैसा कुछ कि वह अपनी आँख से देखेगा, और जो कुछ कि हालत उस पर बीतेगी, उसी मुवाफ़िक़ उसकी रहनी और व्यवहार और चाह होवेगी। और जो चाह कि उसके मन में ज़बर होगी, उसी के पूरा करने के वास्ते वह मेहनत और तवज्जह के साथ जतन करेगा।

६–अमर और परम सुख की प्राप्ति के लिये जतन करना ज़रूर है, और उसी का नाम सच्चा परमार्थ है

४७–सब जीव, दुनिया के सुखों के वास्ते, मेहनत कर रहे हैं और दुखों के दूर करने के लिए तदबीर करते हैं। पर इस दुनिया के जितने सुख हैं, वे सब मन और इन्द्रियों के भोग हैं और नाशमान और तुच्छ और जड़ हैं। और जिस किसी को यह सब सुख मिल भी गये तो एक दिन उनको ज़रूर, मरने के वक़्त, छोड़ना पड़ेगा। और जो उन्हीं की चाह मन में ज़बर रही और उम्र भर यही काम करता रहा, तो उसी चाह और स्वभाव और आदत के मुवाफ़िक़ फिर जनम धरना पड़ेगा। और इसी तरह हमेशा जनम-मरन का चक्कर जारी रहेगा और दुख-सुख भोगता रहेगा, और चाहे जैसा जतन करे, देही के दुख-सुख से कभी निवृत्ति नहीं होवेगी।

४८—अब समझना चाहिए कि जिस क़दर सुख और ज्ञान और आनन्द और रस हैं, सब सुरत की धार के वसीले से मालूम होते हैं। जो वह धार शामिल न होवे या हट जावे तो यह सब सुख और आनन्द और ज्ञान जाते रहें। और जब कि सुरत की एक एक धार में इस क़दर रस और आनन्द है कि मनुष्य उस में फँस रहे हैं, तब

सुरत के भंडार में यानी उस रूहानी और निर्मल चैतन्य देश में जहाँ से कि सब सुरतें आई हैं, किस क़दर रस और आनन्द और सुख और ज्ञान होवेगा ?

४६—इस वास्ते हर एक मनुष्य को, चाहे पुरुष होवे या स्त्री, मुनासिब है कि उस परम आनन्द की प्राप्ति के लिए थोड़ा-बहुत जतन ज़रूर करे। और जिस क़दर वह जतन करता जावेगा, इस नीचे के देश से ऊँचे देश में चढ़ कर विशेष सुख भोगता जावेगा और रफ़्ता २ एक दिन परम और अमर आनन्द के भंडार में पहुँच जावेगा, और वहाँ पहुँच कर आप भी अमर हो जावेगा और वह देश भी जो निर्मल चैतन्य का भंडार है, अमर है, और वहाँ का सुख भी अमर है।

५०—जो कोई इस बात को नहीं मानेगा, वह इसी नीचे देश में पड़ा रहेगा, और बारम्बार ऊँची-नीची जोनों में, और ऊँचे-नीचे देशों में देह धर कर दुख-सुख भोगता, रहेगा, और अपनी करनी और करम के मुवाफ़िक़ उन जोनों में फल पावेगा।

५१—सिवाय इसके मनुष्य में तीन क़िस्म की ताक़तें मौजूद हैं। पहिली, देह और इन्द्रियों की, दूसरी, मन और बुद्धि की, और तीसरी, सुरत (रूह) की। जो कोई इन तीनों ताक़तों को मंथन करके जगावे, वह सब में श्रेष्ठ कहलावे, और ऊँचे दरजे में पहुँच सकता है, और मालिक के भेद

को जान सकता है। और जो सिर्फ़ एक-एक ताक़त को जगावेगा, वह उसी मुवाफ़िक फ़ायदा उठावेगा। लेकिन जो सुरत की ताक़त को मथन यानी अभ्यास करके जगावेगा, उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकेगा। वह ख़ुद मालिक का प्यारा हो जावेगा और सब रचना उसकी फ़रमा-बरदारी करेगी।

५२—अब समझो कि जिसने देह और इन्द्रियों की क़ुव्वतें भी नहीं जगाईं, वह सिर्फ़, क़ुली या हल जोतने का काम करके मुश्किल से अपना और अपने कुटुम्ब का पेट भरेगा और हैवानों के मुवाफ़िक़ नादान रहेगा, और जिसने कि यह क़ुव्वतें जगाईं जैसे सीने, लिखने, तसवीर खींचने, गाने बजाने वग़ैरा का काम सीखा, वह किस क़दर फ़ायदा अपनी मेहनत से उठा सकता है ?

५३—और जिसने अक़्ली और इल्मी क़ुव्वत को मदरसे में अभ्यास और मश्क़ करके जगाया, वह देखो किस क़दर बड़ा दरजा हाकिमी व डाक्टरी व जजी व मुंसिफ़ी व आनरेरी वग़ैरा का पाता है ? और अपनी मेहनत और कार्रवाई से किस क़दर ज़्यादा फ़ायदा उठाता है ? और किस क़दर मान बड़ाई उसकी होती है और हज़ारों लाखों आदमियों पर हुक्म चलाता है ?

५४—और जिसने अपनी सुरत यानी रूह की ताक़त को अभ्यास करके जगाया, जैसे कबीर साहब और गुरु

नानक साहब जो संत हुए, और कृष्ण महाराज और रामचन्द्र और बौधजी औतार, और ब्यास और वशिष्ठ जी वग़ैरा महात्मा, और हज़रत ईसा और हज़रत मुहम्मद और पैग़म्बर और औलिया वग़ैरा, उनकी किस क़दर महिमा और शुहरत हुई कि औरत और मर्द और बच्चे अनेक देशों में उनके नाम की ताज़ीम करते हैं, और उनकी बानी और बचन को अपनी मुक्ति का वसीला समझते हैं, और कैसे भाव और प्यार के साथ उनकी पूजा और यादगारी करते हैं ? बा-वजूदे कि उनको सैकड़ों और हज़ारों वर्ष गुज़र गये, मगर उनका नाम और बानी ब-दस्तूर लोगों के दिलों में ताज़ा असर करती है ।

५५--अब समझना चाहिए कि हर एक औरत और मर्द पर फ़र्ज़ है कि थोड़ा बहुत तीनों क़ुव्वतों को अभ्यास करके जगावे ।

५६--और जो ऐसा नहीं करेंगे, तो यह क़ुव्वतें उन में जैसी सोती आईं, वैसी ही सोती रहेंगी, और उनके जगाने से जो फ़ायदा हासिल होना मुमकिन है, उससे वे महरूम और अभागी रहेंगे ।

५७--इन सब में से रूह यानी सुरत की क़ुव्वत को तो ज़रूर थोड़ा-बहुत जगाना हर एक मनुष्य को लाज़िम और फ़र्ज़ है, कि उसमें उसके जीव (रूह) का कल्यान और मालिक के देश में पहुँच कर परम आनन्द का प्राप्त होना

मुमकिन है, और नहीं तो हमेशा अँधेरे यानी माया के घेर में पड़ा रहेगा और देहियों के साथ दुख-सुख और जनम-मरन की तक़लीफ़ भोगता रहेगा।

५८—सिवाय इसके दफ़ा ३६, ३७, ३८, ३९, ४० के पढ़ने से मालूम होगा कि सुरत (रूह) मरने के वक़्त आँख के रास्ते होकर जाती है, यानी जब पुतली उलट जाती है, उस वक़्त मौत हो जाती है। अब, हर एक मनुष्य को चाहे स्त्री होवे या पुरुष, ज़रूर और मुनासिब है कि अपने मरने के वक़्त से पहिले, इस रास्ते को जिस क़दर बन सके खोले, यानी तै करे, और वहाँ की रचना और क़ुदरत और कैफ़ियत अपनी आँखों से देख ले। और जो ऊपर की तरफ़ चलने में आनन्द और सरूर ज़रूर ज़्यादा से ज़्यादा मिलता जावेगा, उसका भोग मन और रूह के साथ थोड़ा-बहुत इस ज़िंदगी में करे, तब अख़ीर वक़्त पर और भी किसी भारी तकलीफ़ या दुख या चिन्ता के समय उसको रंज बहुत कम होगा, और ऐसे वक़्त पर अपने अंदर की तरफ़ तवज्जह करने से फ़ौरन किसी क़दर फ़ायदा मालूम होवेगा।

५९—ऐसे अभ्यासी को कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया-और मेहर और उनके अंग-संग और हाज़िर-नाज़िर होने का सबूत अपने अंतर में मिल कर, दिन २ प्रेम और प्रतीत चरनों में बढ़ती जावेगी, और दुनिया

के काम भी उसके सहज में, कुल्ल मालिक की मौज के मुवाफ़िक़, सरंजाम पावेंगे, और उसके मन में संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से सहज उदासीनता होती जावेगी, और भक्ति बढ़ती जावेगी, कि जिससे यह अपना सच्चा उद्धार होता हुआ जीते-जी आप देखता जावेगा।

६०—सच्चा परमार्थ इसी का नाम है कि अपने घट में जिस रास्ते होकर सुरत (रूह) राधास्वामी देश से उतर कर पिंड में आकर ठहरी है, उसी रास्ते से उसको चला कर, उसके निज देश में पहुँचाना, और अपने सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुँचकर उनके दर्शन के बिलास का आनन्द लेना।

६१—संत मत में कुल्ल मालिक की महिमा और पूजा है, और वह पूजा ज़ाहिरी नहीं है। उसका भेद लेकर उससे मिलने का जतन करना यही पूजा है। और उसके चरनों में दिन २ प्रीति और प्रतीत का बढ़ाना यही उसकी भक्ति है।

६२—और जो कि सच्चा और कुल्ल मालिक सब जगह मौजूद है, और मनुष्य इस लोक में सबसे श्रेष्ठ यानी उत्तम है, फिर मनुष्य के चोले में उसका प्रकाश ब-निस्बत और रचना इस लोक के, ज़्यादा प्रकट है। इस वास्ते जो कोई उससे मिलना चाहे या उसका प्रकाश और जलवा देखना चाहे, उसको मुनासिब है कि अपने घट में उसका पता

और भेद लेकर खोज करे, क्योंकि मनुष्य का चोला कुल्ल रचना का नमूना है और इस चोले में जो कुछ कि बाहर रचना है, वह सब छोटे स्केल पर मौजूद है। जैसे कि एक तसवीर बड़ी और एक उसी की नक़ल छोटी, दोनों में बराबर सब आकार बड़े और छोटे के हिसाब से मौजूद हैं।

६३—बाहरमुख पूजा जिस क़दर कि है, वह नक़ल की है, या मनुष्य से कमतर दरजे की रचना की है। यह दोनों असल से बहुत दूर हैं, और जो इनका सिलसिला असल से नहीं लगा हुआ है यानी असल का भेद जो घट में है, नहीं मालूम है, और न उसके मिलने की तरकीब की ख़बर है, तो वह सब पूजा वृथा और फ़िजूल है, क्योंकि उस काम के करने से कभी असल नहीं मिलेगा, जब तक कि भेदी से उसका भेद लेकर, वह जुगत कि जिससे मेला होवे, अपने अंतर में कमाई न जावे।

६४—और वह भेद और जुगत यानी तरीक़ा अभ्यास का, इस वक़्त में, सिर्फ़ राधास्वामी मत में मिल सकता है। और किसी मत में उस भेद और तरीक़े का ज़िक्र भी नहीं है। और वह जुगत ऐसी है कि लड़का, जवान, बूढ़ा, चाहे स्त्री होवे या पुरुष, उसको आसानी के साथ, बग़ैर किसी ख़तरे या विघ्न के, कमा सकता है।

६५—और मतों में प्राणायाम को सब में बढ़का तरीक़ा या योग क़रार दिया है। पर वह ऐसा मुश्किल

और ख़तरनाक है कि विरक्तों से भी उसका अभ्यास नहीं बन सकता, फिर बिचारे गृहस्थी और ख़ास कर औरतें तो उसके संजमों की निगह-दाश्त, और प्राणों के रोकने और चढ़ाने का अभ्यास बिलकुल नहीं कर सकतीं। और इस सबब से उनका उद्धार उन मतों के मुवाफ़िक़ मुतलक़ नहीं हो सकता।

६५—इन मतों के आचार्यों ने प्राण की धार पर सवार होकर रास्ता तै करना बतलाया, यानी प्राण-योग का उपदेश किया, पर संतों ने रूह (सुरत) की धार की सवारी तज़वीज़ की। अब ख़याल करो कि रूह की धार बड़ी है या प्राण की धार? सोते में प्राण की धार जारी रहती है मगर कुल्ल कार्रवाई मन और इन्द्रियों की बन्द रहती है, और जाग्रत में जब कि रूह की धार आँखों के मुक़ाम पर आकर ठहरी, उस वक़्त कुल्ल कार्रवाई तन, मन और इन्द्रियों की जारी हो जाती है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि जो कोई रूह की धार पर सवार होकर घर की तरफ़ चलेगा, वह सुखाला पहुँचेगा, और जल्द, मन और इन्द्रिय और तन उसके क़ाबू में आवेंगे, और किसी तरह का ख़तरा और विघ्न रास्ते में पैदा नहीं होगा। और जो प्राण की धार के आसरे चलेगा, उसको प्राणों का रोकना और चढ़ाना बग़ैर पाबंदी (बर्ताव) मुक़र्रर किये हुए संजमों के, जो कि निहायत कठिन और मुश्किल हैं और न गृहस्थ

से बन सकते हैं और न विरक्त से, क़तई ना-मुमकिन होगा। इस वास्ते यह रास्ता बिलकुल बन्द हो गया और सिर्फ़ ज़बानी या तहरीरी बात-चीत इस अभ्यास की रह गई। और जो बिलफ़र्ज़ किसी एक विरक्त से थोड़ा-बहुत अभ्यास बना भी, तो बाक़ी विरक्त और कुल्ल गृहस्थियों से तो उसका बन आना ना-मुमकिन है। फिर ऐसे रास्ते के बयान करने से क्या फ़ायदा? किताबों में उसका ज़िक्र लिखने और ज़बानी बयान करने से अभ्यास का फल नहीं मिल सकता है।

६७–इस वास्ते जो अभ्यास कि संतों ने बताया है, उसका मानना और उसके मुवाफ़िक़ थोड़ी-बहुत कार्रवाई करना, हर एक को, चाहे औरत होवे या मर्द-मुनासिब और ज़रूर है, क्योंकि बग़ैर उसके दुनिया और देह के सुख-दुख और जनम-मरन के सख़्त दुक्खों से बचाव किसी तरह मुमकिन नहीं, और न सच्चा और पूरा उद्धार या मुक्ति हासिल हो सकती है।

१०–वर्णन कैफ़ियत सुरत-शब्द अभ्यास की

६८–इस अभ्यास का नाम सुरत-शब्द योग है यानी सुरत (रूह) को शब्द के साथ मिला कर चढ़ाना। और शब्द नाम सिर्फ़ आवाज़ का नहीं है, बल्कि चैतन्य की धार से मतलब है। क्योंकि जहाँ धार रवाँ है, वहाँ उसके

साथ आवाज़ भी बराबर होती है। धार नज़र नहीं आती, पर आवाज़ से उसकी पहिचान होती है, जैसे आदमी का असली रूप यानी उसकी सुरत रूह की कैफ़ियत नज़र नहीं आती, पर आदमी के बोलने से मालूम होता है कि रूह सुरत उसमें मौजूद है और कार्रवाई कर रही है। कुल्ल रचना में शब्द के वसीले से कार्रवाई हो रही है और यह शब्द निशान और ज़हूरा चैतन्य का है। जहाँ शब्द नहीं, वहाँ चैतन्य भी नहीं, यानी गुप्त है।

६९—सुरत-चैतन्य को शब्द-चैतन्य से मिलाने का मतलब यह है कि सुरत, जो उस शब्द की धार है, उसको अपने घर की तरफ़, आवाज़ की डोरी को पकड़ के उलटाना। और आवाज़ की बराबर कोई अँधेरे में उजाला करने वाला और रास्ता दिखलाने वाला नहीं है। जब कि कोई आदमी अँधेरी रात में जंगल में रास्ता भूल जावे और उस वक़्त, ब-सबब छाये होने बादल के, किसी क़िस्म की रोशनी, चाँद तारागन बिजली और मशाल वग़ैरा की, नहीं है, तो जो आवाज़ आदमियों की किसी नज़दीक के गाँव से आती होवे, उसको पकड़ के, भूला हुआ आदमी गाँव में पहुँच सकता है।

७०—इसी तरह यह आवाज़ अनहद शब्द की, जो घट २ में पूर है, और बग़ैर मदद ज़बान या किसी बाजे के हर वक़्त जारी है, ऊँचे से ऊँचे देश यानी कुल्ल मालिक

के दरबार से आरही है और एक-एक रास्ते के स्थान पर ठहर कर, और फिर उस धार के वसीले से जो वहाँ से निकली है, बरामद होकर (निकल कर) कुछ तबदीली के साथ, बराबर ऊपर से नीचे के मुक़ाम तक जारी है, और कुल्ल देह और रचना भर में फैली हुई है। जो कोई इस आवाज़ का भेद और पता, यानी स्थान-स्थान के शब्द का हाल, भेदी से दरियाफ़्त करके अपने मन और चित्त से उसको सुनता हुआ, आंखों के रास्ते से चलना शुरू करे, वह दिन २ उस स्थान के, जहाँ से कि पहिली आवाज़ आ रही है, नज़दीक पहुँचता जावेगा, और फिर वहां से दूसरे शब्द को पकड़ के चलेगा। इसी तरह सब मंज़िलें रास्ते की तै करता हुआ एक दिन कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के देश में जा पहुँचेगा।

७१—मालिक कुल्ल अरूप और विदेह है। उसका ध्यान किसी तरह कोई नहीं कर सकता है। पर शब्द के वसीले से, जो मालिक के चरनों से जारी हुआ है, अभ्यासी ध्यान करता हुआ पहुँच सकता है, क्योंकि शब्द उस मालिक का प्रथम ज़हूरा और निशान है। और जैसे कि वह मालिक अरूप है, शब्द भी अरूप है, पर ध्यान में बहुत भारी मदद देता है, यानी ध्याता को उसके इष्ट के पास पहुँचाता है, इसी तरह अरूप का ध्यान करके अभ्यासी उस अरूप पद में पहुँच सकता है। और कोई रास्ता या

तरकीब पहुँचने की, ऐसा आसान और बे-ख़तरा और निश्चय करके सीधी राह से पहुँचाने वाली, क़तई नहीं है। क्योंकि रूह की धार जो शब्द की धार है, उस से बढ़ कर और कोई धार रची नहीं गई है। वह और सब धारों को कर्त्ता और चैतन्य करने वाली है। ख़ुद प्राण की धार भी रूह यानी जान की धार से चैतन्य है। फिर सुरत-शब्द से बढ़ कर और कोई जुगत न रची गई और न हो सकती है।

७२—यह बात सब को मालूम होवेगी कि सुरत (रूह) का आवाज़ के साथ प्यार और इश्क़ ज़ाती यानी असली है। जैसे कोई आदमी कैसे ही ज़रूरी काम के वास्ते जाता होवे, और जो कहीं रास्ते में उम्दा गाना-बजाना होता होवे, तो ज़रूर थोड़ी देर के वास्ते वहाँ ठहर कर उसको शौक़ से सुनेगा। बल्कि सिर्फ़ आदमी ही नहीं, जानवर भी उम्दा बाजे और रसीली आवाज़ के आशिक़ हैं और उसको बड़ी तवज्जह के साथ एकाग्र चित्त हो कर सुनते हैं और ख़ुश होते नज़र आते हैं। सबब इसका यही है कि सुरत का भंडार शब्द है, और यह आप भी आवाज़ स्वरूप है, और इस वास्ते आवाज़ के साथ इसकी प्रीत या इश्क़ ज़ाती और असली है। रसीली आवाज़ सुन कर सुरत और मन मस्त हो जाते हैं और गाने या बाजा बजाने वाले के संग २ फिरते हैं, और कभी ख़ुशी में भर कर

नाचने लगते हैं और ज़्यादती सरूर में बे-होश हो जाते हैं।

७३—जिस किसी को सच्चा शौक़ होवे, इस अभ्यास का चंद रोज़ यानी एक महीने, पन्द्रह रोज़ इम्तिहान और परीक्षा करके आप देख ले। क्योंकि यह राधास्वामी मत करनी का है, बातों और विद्या बुद्धि की चतुराई का नहीं है। विद्यावान अपनी बुद्धि के अहंकार में, संतों के बचन को ग़ौर और फ़िक्र के साथ, बिना पक्षपात के, न सुन कर कोरे रह गये, और उनको सच्चे मालिक का या उसके मिलने के रास्ते और तरीक़े का पता न लगा। सिर्फ़ बातों में संतोष करके थक रहे और अहंकार किया कि उनकी बराबर कोई कुछ नहीं जानता है, और हक़ीक़त में असल भेद कुल्ल मालिक और जीव यानी सुरत और शब्द की धार से बिल्कुल बे-ख़बर हैं।

७४—जो सच्चे खोजी और दर्दी लोग हैं और किसी मत या तरीक़े में उनका बंधन और पक्ष नहीं है और न अपनी विद्या और बुद्धि का ऐसा अहंकार रखते हैं कि हमने सब कुछ जान लिया और समझ लिया है, वे राधास्वामी मत के अभ्यास के लायक़ हैं। और वही राधास्वामी मत के हाल और भेद और अभ्यास की जुगत को सुन कर मगन होवेंगे, और उसको दिलो जान से मानेंगे, और उसके मुवाफ़िक़ करनी करके उसके फल को प्राप्त होंगे, यानी अपनी ज़िन्दगी में अपने सच्चे उद्धार और

सच्ची मुक्ति का सबूत हासिल करेंगे, और एक दिन सच्चे मालिक के देश में पहुँच कर उसके दर्शन का आनन्द लेवेंगे, और जनम-मरन और देह के दुख-सुखों से बच जावेंगे।

११–राधास्वामी मत के अभ्यासी को प्रेम और सच्चे शौक़ की ज़रूरत, और उसकी महिमा

७५—जितने काम दुनिया के हैं, बग़ैर शौक या मोहब्बत के, वह दुरुस्ती से नहीं बन सकते हैं, यानी जब तक कि उनमें मन और इन्द्रिय पूरी तवज्जह के साथ शामिल नहीं होते हैं, वह काम दुरुस्त नहीं होते। फिर परमार्थ का खोज और अभ्यास बग़ैर पूरी तवज्जह के किस तरह दुरुस्त बन सकता है? इस वास्ते राधास्वामी मत में, सच्चे परमार्थी को ज़रूर है कि प्रेम अंग लेकर सतसंग और अभ्यास करे, तो उसमें फ़ायदा मालूम पड़ेगा। और नहीं तो उसकी कार्रवाई रूखेपन के साथ होवेगी और उसमें रस कुछ नहीं आवेगा और न प्रीत और प्रतीत बढ़ेगी।

७६—जो प्रेम कि प्रतीत के साथ है, उसके ठहराव का भरोसा ज़्यादा होता है, और उसमें फ़ायदा भी ज़्यादा मिलेगा, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया

भी ज़्यादा आवेगी और यह प्रतीत सतसंग करके हासिल होगी।

७७–सतसंग नाम गुरु या साध के संग का है। और वह गुरु और साध, संत-मत अथवा राधास्वामी मत के पैरौ होने चाहिये। ऐसे सतसंग में सिवाय इन बातों, के और किसी लड़ाई-झगड़े, क़िस्मे-बखेड़े का ज़िक्र न होगा–(१) महिमा सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की और भेद रास्ते और मंज़िलों का और जुगत रास्ता तै करने की। (२) तरीक़ा बढ़ाने प्रेम-प्रीत का, राधास्वामी दयाल और गुरु के चरणों में। (३) पैदा करना हालत उदासीनता का, दुनिया और उसके भोगों की तरफ़ से, अपने मन में। (४) वर्णन उन विघ्नों का, जो मन और माया अभ्यासी के रोकने को पैदा करते हैं। (५) हाल उस कैफ़ियत का, जो अभ्यासी को हालत सतसंग और अभ्यास में मालूम होती है और (६) ज़िक्र चढ़ाई सुरत का, मुक़ामों पर, और उसकी हालत वग़ैरा।

७८–सतसंग में बैठ कर और चित्त देकर बचन सुनने से बहुत से संशय और भरम दूर होते हैं, और बहुत सी चीज़ों में या बातों में जो भाव और पकड़ जीव की अर्से से चली आता है, वह भी ढीली हो जाती है। इस तरह आहिस्ता २ जीव क़ाबिल अभ्यास करने सुरत-शब्द योग के, हो जाता है और जिन्होंने कि सतसंग नहीं

किया और सिर्फ़ अभ्यास की बड़ाई सुन कर और मत में शामिल होकर यानी उपदेश ले कर उसकी कमाई करने लगे, तो उनसे अभ्यास जैसा चाहिये वैसा बन नहीं पड़ेगा और न रस आवेगा। क्योंकि जब तक संशय और भरम दूर न होवें और अंतर में सफ़ाई न होवे, तब तक मन और सुरत सर्व-अंग करके दुरुस्ती के साथ अभ्यास में नहीं लगते।

७६—इसी तरह जब कोई सतसंग में बैठ कर पहिचान कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और उनके धाम की, और भेद रास्ते का, और बड़ाई सुरत शब्द मारग की, सुनेगा और बुद्धि से अच्छी तरह समझेगा, तब उसके मन में संतों के बचन की थोड़ी-बहुत प्रतीत आवेगी। और जब उस प्रतीत के मुवाफ़िक़ थोड़ा-बहुत अभ्यास करके रस और राधास्वामी दयाल की दया का परचा अपने अंतर में पावेगा, तब सच्ची प्रीत घट में पैदा होगी, और प्रतीत बढ़ती जावेगी, और फिर अभ्यास का भी शौक़ बढ़ता जावेगा।

८०—बग़ैर थोड़े बहुत ऐसे शौक़ और प्रीत और प्रतीत के, रास्ता घट में तै करना और क़ुदरत की कैफ़ियत को देखना मुशकिल है, क्योंकि जब तक कुछ भी शौक़ और प्रीत और प्रतीत दिल में नहीं आवेगी, तब तक सुरत और मन और इन्द्रियां सिमट कर अभ्यास में नहीं

लगेंगी, और न उस में रस आवेगा। और इस सबब से अभ्यासी थोड़े दिन कुछ कार्रवाई करके, उसको थक कर और निरास होकर छोड़ देगा, और संतों के बचन को रोचक समझ कर उनका निरादर करेगा।

८१—प्रेम या प्रीत खैंच-शक्ति को, यानी क़ुव्वते जाज़बा को कहते हैं। इसी शक्ति से तमाम रचना, जो कि छोटे २ ज़र्रे या परमाणु से मिल कर रची गई है, क़ायम है, और कुल्ल देहियों या सूरतों का ठहराव और कार्रवाई इसी शक्ति के आसरे हो रही है। जो प्रेम न होवे तो कोई किसी से मेल न करे और न किसी काम में मन लगा कर उसकी कार्रवाई करे।

८२—जब कि कुल्ल रचना की कार्रवाई प्रेम के आसरे जारी है, बल्कि सब रचना प्रेम के वसीले से ठहरी हुई है, तो परमार्थ की कार्रवाई जिससे सुरत-अंश अपने अंशी यानी भंडार से मिलना चाहती है, किस तरह बग़ैर प्रेम के जारी हो सकती है? और क्यों कर बिना सच्चे शौक़ के इन दोनों का आपस में मेला हो सकता है?

८३—कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल प्रेम का भंडार हैं, और सुरत जो उनकी अंश या धार है, वह भी प्रेम स्वरूप है। इस वास्ते जब तक सुरत में प्रेम न प्रकट होगा, तब तक उसका मेल अपने भंडार से नहीं होगा, यानी रास्ता तै करके उस भंडार में पहुँचने की कार्रवाई

(जिसको सुरत-शब्द का अभ्यास कहते हैं) दुरुस्ती से नहीं बन पड़ेगी।

८४—ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि जब तक पहिले सतसंग करके, प्रीत और प्रतीत मन में नहीं आवेगी, और संशय और भरम दूर न होवेंगे, तब तक प्रेम पैदा न होगा। इस वास्ते हर एक सच्चे खोजी और दर्दी परमार्थी को मुनासिब और ज़रूर है कि पहिले राधास्वामी मत के सतसंग में शामिल होकर होशियारी से बचनों को सुन कर और समझ कर, और अपने संशय और भरम दूर करके, अभ्यास शुरू करे, तब उसको उसका फ़ायदा जल्द मालूम होवेगा, और आइंदा को दिन २ मुवाफ़िक़ उसकी लगन के, तरक़्क़ी होती जावेगी।

१२—राधास्वामी मत में पाप-पुण्य यानी शुभ और अशुभ कर्म की शरह

८५—राधास्वामी मत में शुभ और अशुभ कर्म यानी पुण्य और पाप की शरह ऐसे तौर पर की गई है कि जिस में किसी को किसी तरह का शक और पकड़ के वास्ते मौक़ा नहीं रहता है। और जो अनेक फ़िरक़ों और अनेक मत वालों ने बहुत से काम पुण्य और बहुत से पाप के साथ नामज़द किये हैं, इनमें बहुत भेद रहता है। यानी बाज़े काम ऐसे हैं कि एक मत या एक देश में वे पाप

समझे जाते हैं और दूसरे देश और मत में पुण्य माने जाते हैं, या एक ही मत में एक वक़्त वे पाप कर्म, और दूसरे वक़्त में जायज़ शुमार किये जाते हैं। जैसे जानदार का मारना आम तौर पर अज़ाब में दाख़िल है, और मांस-अहारियों में वही काम जारी है। या आदमी का मारना गुनाह है और लड़ाई में वही काम जायज़ समझा गया। या अपने पड़ोसी का माल और ज़मीन छीन लेना या उससे ज़बरदस्ती करना ना-मुनासिब समझा गया और राजे और बादशाह लोग अपने क़रीब के कमज़ोर राजों का राज ज़रा-ज़रा सी बात पर नाराज़ होकर छीन लेते हैं और यह काम मुल्कगीरी में दाख़िल किया गया। या यह कि दूसरे के माल या औरत को हाथ लगाना पाप समझा गया, लेकिन बाद फ़तह के राजा लोग शहरों के लूटने का हुक्म दे देते हैं और उस वक़्त उनकी फ़ौज बहुत से बे-गुनाह मर्द और औरत को क़तल कर डालती है और उनका माल लूट लेती है और औरतों की इज़्ज़त बिगाड़ती है। या यह कि अपने मतलब के वास्ते झूठ बोलना नाक़िस समझा गया और राजों की आपस की कार्रवाई में उनके वकील तरह २ की बातें बना कर और तहरीरात को उलट-फेर कर उनके मानी और मतलब अपने मुफ़ीद लगा कर जो कार्रवाई करते हैं, वह दानाई और उम्दा कार-गुज़ारी में दाख़िल होती है। या दीवानी और फ़ौजदारी के

मुआमलात में जो कोई वकील या मुख़्तार क़ानून और अपनी तक़रीर के ज़ोर से सफ़ेद को स्याह या स्याह को सफ़ेद दिखला देवे, वह बहुत होशियार और चालाक कारकुन समझा जाता है।

८६—राधास्वामी मत में जो काम कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में सुरत को पहुँचावे, शुभ और पुण्य कर्म में दाख़िल है, और जिस काम के करने से दूरी होती जावे, वही अशुभ और पाप कर्म है। यह शुभ और अशुभ कर्म मनुष्य की ज़ात से ताल्लुक़ रखते हैं।

८७—कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल सबकी जड़ यानी आदि भंडार हैं। उन्हीं के चरनों से धार प्रकट होकर नीचे तक रचना करती चली आई। जिस धार यानी सुरत का रुख़, मन और इन्द्रियों के वसीले से बाहर और नीचे की तरफ़ है, और उसी तरफ़ उसकी कार्रवाई जारी है, वह दिन-दिन किसी क़दर दूर होती जावेगी। और जिस सुरत ने कि संत मत का भेद और जुगत लेकर अपना रुख़ चरनों की तरफ़ मोड़ना शुरू किया और राधास्वामी दयाल के सनमुख पहुंचने और उनके दर्शन का बिलास हासिल करने का इरादा सच्चा और पक्का करके, अभ्यास शुरू किया, वही सुरत दिन २ नज़दीक होकर एक दिन चरनों में पहुँच जावेगी। ऐसी समझ लेकर सुरत-शब्द का अभ्यास करना यह शुभ और पुण्य कर्म है।

८८—असली शुभ और अशुभ कर्म यही हैं कि जिनका ज़िक्र ऊपर लिखा गया। अब वह शरह इन कर्मों की, की जाती है जो इस लोक के व्यवहार के ताल्लुक़ है। और वह यह है कि जो काम कि यह जीव अपनी निस्बत पसंद न करे, उसको औरों की निस्बत भी पसंद करना नहीं चाहिए, यानी जैसा कि यह चाहता है कि लोग इससे बर्ताव करें, वैसा ही इसको चाहिए कि औरों के साथ आप बर्ताव करे। इस में किसी को इसके हाथ से रंज और तकलीफ़ नहीं पहुँचेगी। इस वास्ते इसी का नाम शुभ और पुण्य कर्म है और इसके बर-ख़िलाफ बर्ताव करना, अशुभ और पाप कर्म है। यानी ख़ास अपने आराम और मतलब के लिए मन और बचन और काया से दूसरों को नुक़सान या रंज या तकलीफ़ पहुंचाना पाप है, और बग़ैर अपने ख़ास मतलब के, दूसरों को सुख और फ़ायदा पहुँचाना, पुण्य कर्म है। जो फ़ायदा और आराम न दे सके तो इस मनुष्य को चाहिए कि किसी को दुख भी न देवे।

८९—जो कोई इन दोनों क़िस्म के शुभ और अशुभ कर्मों पर नज़र रख कर, समझ के साथ, कार्रवाई करेगा, उससे कुल्ल मालिक राज़ी होकर, उसको प्रेम और भक्ति दान यानी अपनी नज़दीकी और मुहब्बत की बख़्शिश करेगा, और जो बर-ख़िलाफ़ इसके काम करेगा, वह दिन २

मालिक के दरबार से दूर होता जावेगा और अंधेरे के घेर में जनम-मरन के चक्कर में देहियों के साथ दुख-सुख सहता रहेगा।

९०—राधास्वामी मत में इस बात की बहुत ताकीद है कि अभ्यासी ऊपर की लिखी हुई हिदायत के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करे। तब उसका प्रेम और भक्ति दिन-दिन बढ़ती जावेगी, और अभ्यास में भी आनंद और रस मिलता जावेगा। और जो इस हुक्म के मानने में समझ बूझ कर बे-परवाही करेगा, वह अपनी कार्रवाई के एवज़ में तकलीफ़ पावेगा और मालिक के चरनों के प्रेम से किसी क़दर ख़ाली रहेगा।

१३—बयान इस बात का कि कोई सच्चा और कुल्ल मालिक ज़रूर है और जीव सुरत उसकी अंश है

९१—जो कोई, निस्बत मौजूदगी कुल्ल और सच्चे मालिक के, शक लावे, तो उसको यह कहा जाता है कि देखो चैतन्य सब जगह मौजूद है, पर बिना मदद अपने से विशेष चैतन्य के कुछ कार्रवाई नहीं कर सकता है, जैसे इस लोक में भी चैतन्य मौजूद है, पर बग़ैर मदद सूरज की रोशनी और गरमी के यहाँ कुछ रचना नहीं हो सकती और न क़ायम रह सकती है। और यह सूरज मय अपने

कुटुम्ब परिवार के, यानी तारों के, दूसरे अपने से ऊँचे सूरज के गिर्द घूम रहा है जो कि इसका मरकज़ है, यानी यह हमारा सूरज उस सूरज से ताक़त ले रहा है।

९२—इस क़दर तो आसमानी इल्म और दुरबीन की मदद से मालूम हुआ। और संत फ़रमाते हैं कि उस बड़े सूरज के मंडल के ऊपर तीन सूरज मंडल एक से एक बहुत बड़े और हैं और इन सब के ऊपर राधास्वामी धाम है, जो कि कुल्ल का मालिक और कुल्ल का निज भंडार है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि एक के ऊपर एक मालिक चला गया है और राधास्वामी कुल्ल के मालिक हैं। राधास्वामी धाम अपार और अनंत है। उसके परे और कोई मंडल या रचना नहीं है।

९३—जो लोग कि अपनी नादानी और बे-ख़बरी से कहते है कि कोई मालिक नहीं है और यह रचना आप ही आप मसाले यानी माया से हुई है, किस क़दर ग़लती में पड़े है ? उनकी देह की कार्रवाई और इस लोक की कार्रवाई से साफ़ ज़ाहिर है कि कुल्ल रचना का ताल्लुक़ और उसकी कार्रवाई किसी ऊँचे से ऊँचे और बड़े से बड़े स्थान से हो रही है, जैसे देह की कार्रवाई उस धार पर मुनहसर है, जो दिमाग़ के ऊँचे मुक़ाम से उतर कर तमाम देह में, रगों के मंडलों के वसीले से, फैली हुई है। और इसी तरह इस लोक और कुल्ल ऊँचे-नीचे लोकों की रचना की

कार्रवाई ऊँचे से ऊँचे और बड़े से बड़े सूरज मंडल के वसीले से जारी है। और वह मालिक कुल्ल अंतरजामी और सर्व समर्थ और महा ज्ञानी और सब से भारी बन्दोबस्त करने वाला और कुल्ल का पैदा करने वाला और कुल्ल रचना को चैतन्यता देने वाला यानी कुल्ल जानों की जान है। जो उस ऊँचे देश से धार हर एक मंडल में होकर न आवे तो सब रचना का खेल बिगड़ जावे और बंद हो जावे।

९४—इस लोक की कुल्ल रचना और भी देह की रचना से साफ़ ज़ाहिर है कि हर एक देह और उसके अंग-अंग के बनाने में क़ुदरत और समर्थता और इरादा और मतलब और कारीगरी पाई जाती है। फिर यह बातें बग़ैर महा समर्थ और महा ज्ञानी मालिक के किस तरह ज़ाहिर हुईं? और कुल्ल माया और उसके मसाले और शक्तियों पर, उस कुल्ल मालिक की क़ुदरत का असर साफ़ मालूम होता है, यानी यह सब उसी के हुक्म से पैदा हुईं और अब उसी के हुक्म के ताबे हैं, और उसकी मौज के मुवाफ़िक़ उसी की ताक़त के साथ जा-ब-जा कार्रवाई कर रही हैं।

९५—और सुरत जीव उसी कुल्ल मालिक की अंश है। देखो जब यह सुरत जिस शरीर में अपना ज़हूर करती है, जैसे जब किसी दरख़्त के बीज से कुला फूटता

है यानी आदि धार प्रकट हुई, उसी वक़्त से जितनी कि शक्ति हैं, जैसे खैंच, शक्ति, हटाव, शक्ति और बनाव, शक्ति और बिजली और रोशनी, और पाँचों तत्व और तानों गुन, सब उस देह में मौजूद होकर और इसी आकाश से मसाला लेकर, उस देह का बनाव और सम्हाल करते हैं। और जब तक कि सुरत उस देह में मौजूद रहे, तब तक बा-वजूदे कि यह सब आपस में मुख़ालिफ़ और उलटे हैं, पर हिल-मिल कर काम देते हैं और जिस वक़्त कि सुरत उस देह को छोड़ती है, उसी वक़्त से आपस में बर-ख़िलाफ़ी के साथ कार्रवाई करके उसका रूप और रंग बिगाड़ देते हैं।

९६—ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि सब तत्त्व और गुन और शक्तियाँ सुरत के हुक्म-बरदार हैं। जहाँ यह अपना ज़हूरा करे, वहाँ यह सब हाज़िर होकर उसकी ताबेदारी में कार्रवाई करते हैं और जब वह उस देह को छोड़ देवे, तब सब जुदा होकर अपने २ मंडल में समा जाते हैं। और जो कि यह सुरत ही इस लोक में सत्य है कि इसके आसरे सब रचना सत्त दिखलाई देती है यानी कुल्ल देहियाँ अपनी २ कार्रवाई कर रही हैं, और सब देहियों और रूपों को चैतन्य करने वाली भी यही सुरत है, और इसी के वसीले से कुल्ल रस और आनन्द और सरूर पैदा होता है, तो अब यही सुरत सत्त-चित्त-आनन्द

स्वरूप हुई और जो कि यह अमर और अजर है और शब्द इसका ज़हूरा है, तो यह उसी सिंध रूप सत्त-चित्त-आनन्द कुल्ल-मालिक की अंश साबित हुई, यानी इसका और उसका जौहर एक ही है।

९७—जब यह बात साबित हुई कि कोई कुल्ल-मालिक सत्त-चित्त-आनन्द स्वरूप और सर्व-समर्थ और सर्व-ज्ञाना ज़रूर मौजूद है और सुरत जीव उसकी अंश है, तो जब तक कि यह अंश अपने अंशी से, यानी बूँद अपने सिंध, और किरन अपने सूरज में, न पहुँचेगी, तब तक इसको परम आनन्द प्राप्त नहीं होगा। और जब तक माया के घेर में रहेगी, तब तक उसके मसाले के ग़िलाफ़ इस पर चढ़े रहेंगे। यानी इसको देहियों में बैठ कर कार्रवाई करनी पड़ेगी, और उनके साथ दुख-सुख और जनम-मरन की तकलीफ़ सहनी पड़ेगी।

९८—इस वास्ते जो इन तकलीफ़ों से बचना चाहे और परम आनन्द को प्राप्त होना चाहे, उसको राधास्वामी मत के मुवाफ़िक़ अभ्यास करके, आहिस्ता २ इस माया के देश को छोड़ कर, अपने निज घर की तरफ़ ज़रूर चलना चाहिये, और कुल्ल-मालिक की मौजूदगी की निस्बत मन में शक नहीं लाना चाहिये, नहीं तो मरने के बाद बहुत पछताना और शरमाना पड़ेगा और उस वक़्त का अफ़सोस कुछ फ़ायदा नहीं देवेगा।

१४—नीचे दरजे के मालिकों और औतारों और देवताओं की पूजा का बयान और उसका नतीजा

९९—जो लोग कि औरों को, यानी देवताओं और औतारों को, मालिक समझ कर मान रहे हैं, उनका पूरा और सच्चा उद्धार नहीं हो सकता है। और जो परमेश्वर या ब्रह्म या ख़ुदा को कुल्ल-मालिक समझते हैं, वे भी सच्चे कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल से बे ख़बर हैं। और इस वास्ते वे भी माया के घेर से बाहर नहीं जा सकते, और इस सबब से जनम-मरन के चक्कर से नहीं बच सकते, क्योंकि ब्रह्म और ईश्वर और परमेश्वर या परमात्मा सब सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की एक एक कला हैं और माया के संग मिले हुए हैं यानी उससे मिलकर रचना की कार्रवाई कर रहे हैं। उनके लोक में जो कोई उनकी भक्ति करके पहुँचेगा, वह बहुत काल के लिये सुखी हो जावेगा, पर जनम-मरन से बचाव नहीं होगा।

१००—और जितने औतार हुए हैं, वे सब ब्रह्म या विष्णु के हुए हैं। और ब्रह्मा, विष्णु और महादेव, यानी तीनों गुन, बड़े देवता हैं, और बाक़ी देवता इनसे उत्पन्न हुए। इस वास्ते जो कोई इनकी भक्ति करेगा, वह इनके लोक में पहुँच सकता है। मगर इनका लोक अमर नहीं है और न वहाँ की रचना अमर है। इस

सबब से जनम-मरन से छुटकारा नहीं हो सकता है। और ब-निस्बत ब्रह्म, पारब्रह्म और शक्ति के देश या लोक के, देवताओं और औतारों के लोकों में उमर भी थोड़ी है, यानी वहाँ जनम-मरन जल्द होता है और सुख भी ऊपर के लोकों की निस्बत कम है।

१०१—इस वास्ते मुनासिब है कि जब कोई परमार्थी काम करना चाहे, तब अच्छी तरह से निर्णय करके अपने सच्चे मालिक की पहिचान करे, और दूसरों की पक्ष छोड़ कर सच्चे मालिक की सेवा और भक्ति इख्तियार करे। तब पूरा फ़ायदा होगा, क्योंकि भक्ति-भाव सब जगह बराबर और एकसाँ बर्तना पड़ेगा, पर फल यानी फ़ायदे में हर एक के फ़र्क़ होगा।

१०२—और जो कोई असली रूप और धाम औतारों और देवताओं से बे-ख़बर हैं, और सिर्फ़ उनकी नक़ल या मूरत की पूजा और भक्ति करते हैं, और असल का खोज नहीं करते, वे असल को नहीं पा सकते। इस वास्ते उनको उस क़दर सुख भी नहीं मिल सकता, जिस क़दर कि असल के पूजने वालों को मिलता है। इनकी सीढ़ी बहुत नीची है।

१५—वर्णन हाल वाचक-ज्ञानी और सूफ़ी का, और यह कि उनका पूरा उद्धार नहीं होता

१०३—और जो लोग कि इस वक़्त में ज्ञानी और

विद्वान और वेदान्ती या सूफ़ी कहलाते हैं, वे भी कुल्ल-मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल से बे ख़बर हैं। इनको पुराने जोगेश्वर वेदान्ती और ज्ञानी की बानी और बचन से, ब्रह्म पद तक का हाल मालूम हुआ, पर वह भी तफ़सील-वार नहीं, सिर्फ़ इस क़दर कि ब्रह्म सब जगह व्यापक है, और वही सत्त-चित्त-आनन्द स्वरूप है और माया से न्यारा है और कुल्ल रचना ब्रह्म या आत्मा स्वरूप है, फिर कहीं जाना-आना नहीं है। इस क़दर समझ लेकर इस बात का निश्चय कर लेना कि मैं ब्रह्म हूँ, और सब ब्रह्म हैं, वास्ते उद्धार के, वक़्त मौत यानी जुदाई शरीर के, काफ़ी समझते हैं। और मन को, किसी तरकीब से कुछ दिन अभ्यास करके, एकाग्र करना, और उसके पीछे ऐसा विचार करते रहना कि मैं कोई शै रचना में से नहीं हूँ, तत्व नहीं हूँ, गुन नहीं हूँ, वग़ैरा वग़ैरा, फिर जो कुछ कि सब पदार्थों के निषेद के बाद बाक़ी रहा, वही ब्रह्म है, और वह ब्रह्म मैं ही हूँ, यही उनका अभ्यास है। और कोई तरकीब सुरत के चलने और चढ़ने की वे नहीं मानते, और कहते हैं कि जब ब्रह्म सब जगह मौजूद है, फिर चलना और चढ़ना क्या ज़रूर है? और सुरत जीव को वे ब्रह्म से जुदा या उसकी अंश नहीं मानते, सिर्फ़ ब्रह्म ही मानते हैं।

१०४—और जोगेश्वर-ज्ञानी और वेदान्ती जो पुराने वक़्तों में गुज़रे, उन्होंने अष्टांग-योग यानी प्राणायाम

का अभ्यास करके आत्मा को पिंड यानी छः चक्र की हद्द से न्यारा किया, और ब्रह्माण्ड में चढ़ कर और ब्रह्म-पद में पहुंच कर फ़रमाया कि ब्रह्म सर्वत्र-व्यापक है। उनका यह कहना उस स्थान पर पहुंच कर सही था, क्योंकि वहाँ पिंडी और ब्रह्माण्डी माया बहुत नीचे रह गई, और वह शुद्ध ब्रह्म का स्थान था कि जहाँ से सिवाय ब्रह्म के और कोई वस्तु यानी माया वग़ैरा और उसकी रचना नज़र नहीं आती। जैसे ऊँचे पहाड़ पर चढ़ कर नीचे देश की रचना नज़र नहीं आती, सिर्फ़ ग़ुबार या बादल छाया हुआ दिखलाई देता है, या जो कोई समुद्र या बड़े दरिया में गहरा ग़ोता मारे, उसको उस वक़्त सिवाय पानी के दूसरी चीज़ नज़र नहीं आती, ऐसे ही जोगेश्वर ज्ञानियों को शुद्ध ब्रह्म-पद में पहुंचने पर सिर्फ़ ब्रह्म व्यापक नज़र आया, और माया और उसकी रचना, जो नीचे थी, वहाँ से नज़र नहीं आई, और असल में वहाँ पहुंचने वाले की यह हालत सच्ची होती है।

१०५—लेकिन हाल के ज्ञानी और वेदान्ती और सूफ़ियों की अजब हालत है कि इन्होंने कोई अभ्यास प्राण और आत्मा के चढ़ाने का अपने घट में नहीं किया, और न करने की ताक़त और ख़्वाहिश रखते हैं। सिर्फ़ जोगेश्वरों के सिद्धान्त के बचनों को पढ़ कर या सुन कर उनका निश्चय करके अपने को ब्रह्म और ज्ञानी और विद्वान

मान कर चुप हो बैठे। और जो बचन कि उन्हीं जोगेश्वर ज्ञानियों ने निसबत जोग अभ्यास और उसके संजमों की कार्रवाई के लिखे हैं, उनको छोड़ दिया, यानी मेहनत और अभ्यास, वास्ते सफ़ाई और मर्दन करने यानी क़ाबू में लाने मन और इन्द्रियों के, न कर सके। और उनके सिद्धान्त के बचनों से ऐसा समझ कर कि जब ब्रह्म सब जगह मौजूद है तो उससे मिलने के लिये अभ्यास करने की क्या ज़रूरत है, और उन बचनों की तामील कि जिस में अभ्यास के वास्ते ताकीद है, नहीं करते।

१०६–और जोगेश्वर ज्ञानियों ने साफ़ अपने ग्रंथों में फ़रमाया है कि जब तक मन और बासना का नाश न होगा, तब तक तत्त्व-पद का ज्ञान हासिल नहीं हो सकता है। और यह कि जब तक किसी में यह चार साधन पूरे पूरे न पाये जावें, वह ज्ञान के ग्रंथों के पढ़ने का अधिकारी नहीं है। और जो कोई बग़ैर चार साधन हासिल किये उन ग्रंथों को पढ़ेगा, तो वह पढ़ना उसके हक़ में ज़हर-ए-क़ातिल होगा, यानी आत्मघाती हो जावेगा। और वह चार साधन यह हैं (१) वैराग (२) विवेक (३) षट सम्पत्ति (१–सम, यानी अंतःकरण का रोकना, २–दम, यानी बाहर इन्द्रियों का रोकना, ३–उपरति, यानी संसार के दुख-सुख और ख़्वाहिशों से उपराम यानी न्यारे रहना, ४–तितिक्षा, यानी तकलीफ़ की बरदाश्त करना, ५–सरधा, यानी परमार्थ

की सच्ची क़दर और चाह, और गुरु और महात्माओं और उनके बचनों में भाव और प्यार, ६–समाधानता, यानी होशियारी और पूरी समझ के साथ गुरु और महात्माओं के बचन को सुनना, और चित्त में धर के उनके मुवाफ़िक़ बर्ताव करना) और (४) मुमोक्षता, यानी सच्ची और तेज़ चाह वास्ते हासिल करने मुक्ति यानी अपने जीव के कल्यान के।

१०७–अब मालूम होवे कि इन चारों साधन का हासिल होना, और मन और बासना का नाश होना, बग़ैर योग-अभ्यास की मदद से किसी क़दर पिंड से न्यारे होने के, यानी बग़ैर छः चक्र के बेधने के, किसी सूरत में मुमकिन नहीं है। इसी सबब से आज-कल के ज्ञानी, बाचक और विद्यावान कहलाते हैं, यानी बातें तो पूरे जोगेश्वरों की सी बनाते हैं, और उनके मन और इन्द्रियों की हालत और उनका व्यवहार और बर्ताव संसारी और अज्ञानी लोगों के मुवाफ़िक़ है। जो ब्रह्म-आनन्द या आत्म-आनन्द उनको प्राप्त हुआ होता तो उस आनन्द में मगन और बे-परवाह रहते, और मेलों और तमाशों में और देशों और मकानों की सैर के वास्ते, देश विदेश मारे २ न फिरते, और रेल ख़र्च और भंडारों के लिये इससे-उससे माँग कर रुपये न जोड़ते। बल्कि जो सच्ची चाह परमार्थ की और अपने जीव के कल्यान का दर्द उनके दिल में होता, तो किसी पूरे गुरू

या महात्मा को तलाश करके, उसके सनमुख दीनता और आधीनता के साथ रह कर, कोई दिन सुरत और मन की घट में चढ़ाई का अभ्यास करते, कि जिस से चारों साधन पूरे २ उन में आ जाते, और मन और वासना का किसी क़दर नाश हो जाता, और तब ज्ञान के बचन सुनने और समझने के अधिकारी बन जाते।

१०८–लेकिन अफ़सोस की बात है कि इन वाचक ज्ञानियों को अपने मन और इन्द्रियों के हाल की भी ख़बर नहीं कि कैसे चक्रों में उनको डाल कर घुमा रहे हैं। और जो कोई उनको चितावनी का बचन सुनावे तो उससे लड़ने को तैयार होते हैं, और जो संतों का भेद और जुगत मन और सुरत के चढ़ाने की सुनाना चाहे, तो उससे वाद-विवाद करते हैं, और अपने जीव के हित के बचनों का निरादर करके मुतलक़ नहीं सुनते। यह लोग आप भी ठगाये गये और जो कोई उनके बचन सुनेगा और मानेगा वह भी धोखा खावेगा, और अपने जीव के कल्यान में आप ख़लल डालेगा यानी आत्मघाती हो जावेगा।

१०९–ग़ौर करने से मालूम हो सकता है कि चैतन्य में ब-सबब हायल होने (परदा डालने) माया के, बहुत दरजे हो गये हैं यानी ऊँचे से ऊँचे दरजे का चैतन्य महा निर्मल और लतीफ़ है। और जहाँ से कि माया का ज़हूर

हुआ है, उससे नीचे की तरफ़ दरजे-बदरजे माया की कसाफ़त से चैतन्य भी मलीन हो रहा है। और इस लोक का चैतन्य निहायत कसीफ़ यानी मलीन है कि अपनी ताक़त से कोई कार्रवाई रचना की नहीं कर सकता है और सूरज मंडल के विशेष चैतन्य का आधीन है। इसी तरह सूरज मंडल का चैतन्य अपने से ऊँचे के सूरज मंडल के चैतन्य का आधीन है, यानी माया की हद्द में सामान्य और विशेष चैतन्य का हिसाब नीचे से ऊपर तक चला गया है, और माया के घेर के पार महा निर्मल चैतन्य देश है। बग़ैर वहाँ पहुँचे किसी का सच्चा और पूरा उद्धार नहीं हो सकता है। फिर वाचक ज्ञानियों ने जो चैतन्य को व्यापक मान कर ऊपर की तरफ़ चलना चढ़ना नहीं माना तो किस क़दर ग़लती करी और अपने जीव के उद्धार में किस क़दर धोखा खाया ?

११०—क्योंकि इस देश का चैतन्य, मलीन-माया के संग से आप मलीन हो रहा है और जनम-मरन यानी रचना के भाव और अभाव में पड़ा हुआ है। फिर यहाँ रह कर यानी पिंड में बैठ कर जहाँ से कि दुनिया की कार्र-वाई मन और इन्द्रियों के वसीले से हो रही है, किसी का छुटकारा जनम-मरन और देह और दुनिया के दुख-सुख से नहीं हो सकता है। और यही सबब है कि वाचक ज्ञानियों की हालत नहीं बदलती। यानी उनके मन और इन्द्रियों का बर्ताव संसारी और अज्ञानी जीवों के मुवाफ़िक़ रहता है।

१११—जोगेश्वर ज्ञानियों ने ब्रह्म में तीन दरजे क़ायम किये यानी माया-सबल ब्रह्म, जो कि माया से मिल कर रचना कर रहा है, और साक्षी, ब्रह्म, जो कि उसको मदद दे रहा है, और शुद्ध-ब्रह्म, जहाँ कि माया निहायत सूक्ष्म और बीज रूप है और वह पद रचना की कार्रवाई से किसी क़दर न्यारा है, यानी गुप्त मदद दे रहा है। अब जो मुवाफ़िक़ समझ वाचक ज्ञानियों के, ब्रह्म के सर्वत्र-व्यापक होने में कोई भेद नहीं था, तो जोगेश्वर ज्ञानियों ने यह दरजे क्यों मुक़र्रर किये ? और माया-सबल ब्रह्म और साक्षी-ब्रह्म के मंडल में क्यों नहीं ठहरे ? और योग-अभ्यास करके पहिले पिंड से न्यारे होकर और फिर ब्रह्माण्ड में चढ़ कर शुद्ध-ब्रह्म पद में पहुँच कर क्यों विश्राम किया ?

११२—इससे साफ़ ज़ाहिर है कि वाचक ज्ञानी निरे विद्यावान हैं, यानी परमार्थी किताबें, सिर्फ़ मुताल्लिक़ ज्ञान के, पढ़ कर अपने आप को पूरा समझते हैं, और ब्रह्म रूप मानते हैं और अमल यानी अभ्यास कुछ नहीं किया या करते हैं। विद्या यानी इल्म बग़ैर अमल यानी अभ्यास के ख़ाली है। इस वास्ते यह लोग बे-अमल यानी अभ्यास से ख़ाली रह कर अहंकारी और मानी हो गये, और अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मारी, यानी घट में चलने और चढ़ने को फ़िज़ूल समझ कर संसारी और अज्ञानी जीवों के गिरोह में शुमार किये गये, बल्कि उनसे भी कम, क्योंकि

उन लोगों के चित्त में थोड़ी-बहुत दीनता है, और जो कोई महात्मा उनको मिल जावें तो उनके बचन को मान कर उनकी दया के भागी हो जावें, और अपना थोड़ा-बहुत उद्धार का रास्ता जारी कर लेवें। और यह बाचक ज्ञानी इस क़दर अहंकारी और बे-परवाह हो गये कि अपने बराबर किसी को ख़्याल नहीं करते, और किसी के बचन को, जो इनके हित के वास्ते कहे, नहीं मानते हैं।

११३—और मालूम होवे कि वाचक ज्ञानी क़रीब-क़रीब नास्तिक हैं। यानी जब उन्होंने अपने आप को ब्रह्म माना तो उनको किसी की सेवा या भक्ति करने की ज़रूरत नहीं रही, तो वह असली ब्रह्म जो कि तमाम तीन लोक की रचना का करता-धरता है, ग़ायब कर दिया गया, और उसकी भक्ति मौक़ूफ़ हो गई। अब ख़्याल करो कि ऐसे ज्ञान का मत नास्तिक मत हुआ या क्या? क्योंकि यह वाचक ज्ञानी जीवों से अपनी भक्ति और सेवा तो कराते हैं, और आप किसी की भक्ति या सेवा नहीं करते, बल्कि भक्ति से विरोध रखते हैं, और कहते हैं कि जो कोई भक्ति करेगा, उसका जनम-मरन दूर न होगा, और अपना जनम-मरन नहीं मानते हैं। यानी ऐसा ख़्याल करते हैं कि वे देह छोड़ने पर ज़रूर मुक्त हो जावेंगे। और हाल यह है कि अपनी ज़िन्दगी भर में मुक्ति की कुछ भी हालत या कैफ़ियत

नहीं पैदा करी, तब मरने पर किस तरह मुक्ति मिल सकती है ?

११४—जो लोग कि मदर्सों में विद्या पढ़ कर दरजा हासिल करते हैं, उन में से बाज़े, इल्म फ़िलासफ़ी और हिकमत की किताबें पढ़ कर, और कुल्ल-मालिक की मौजूदगी में शक लाकर, नास्तिक मत की तरफ़ रुजू करते हैं। उनका हाल भी थोड़ा-बहुत बाचक ज्ञानियों के मुवाफिक़ समझना चाहिये, यानी बाज़े उनमें से चैतन्य को सब जगह व्यापक मान कर, उसकी और माया की मिलौनी से रचना का ज़हूर कहते हैं, पर उस चैतन्य को समझवार और शक्तिमान नहीं मानते। और कोई २ चैतन्य को न्यारा नहीं मानते। उसको माया के मसाले का खुलासा ख़्याल करते हैं, और कहते हैं कि जब जीव की मौत होती है, उस वक़्त माया का मसाला यानी तत्त्व और गुन वग़ैरा सब आपस में जुदा होकर अपने २ मंडल में जा समाते हैं, और वह चैतन्य क़ुव्वत जो इनकी मजमुई (मिलौनी) शकल से पैदा हुई थी, गुप्त यानी ग़ायब हो जाती है, और फिर मनुष्य के आपे का कुछ निशान बाक़ी नहीं रहता है। इस वास्ते जो कुछ काम किया जाता है, वह इसी ज़िन्दगी के आराम के वास्ते है, और दूसरों को भी आराम देना चाहिये—इससे ज़्यादा वे लोग कुछ नहीं मानते, और मालिक की भक्ति करने वालों को नादान समझते हैं।

११५—यह सब मत, काल-पुरुष ने जीवों के भरमाने और सत्त पद से बे-ख़बर रखने के वास्ते, विद्या और बुद्धि की मदद से, प्रकट कराये। और जो जीव कि उस क़िस्म की तबीयत रखते हैं, वे उन में शामिल होकर सच्चे मालिक से मुनकिर (नास्तिक) हो जाते हैं, और कुल्ल मज़हबों पर जो किसी को मालिक मानते हैं, तान करते हैं, और कहते हैं कि उनके आचार्यों ने अपनी नामवरी और फ़ायदे की नज़र से उन मतों को मूर्ख जीवों में जारी किया, और उनको ख़ौफ़ और उम्मेद दिखा कर अपने बचनों में ख़ूब मज़बूत बाँधा। असल में कोई मालिक नहीं है, और बाद मौत के, कर्म और उसका फल बाक़ी नहीं रहता है और न कहीं स्वर्ग और नर्क वग़ैरा है।

११६—इन लोगों ने सिर्फ़ माया के पदार्थों के भोग-बिलास को अपना आनन्द और सरूर समझा है और जीवों की अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ मदद करना उपकार समझा है। इनकी समझ पर अफ़सोस आता है कि कुल्ल कार्रवाई इस रचना की अपनी आँख से देखते हैं कि वह किसी न किसी रूह की ताक़त से जारी है, और वह रूह किसी न किसी क़िस्म की देह यानी जिस्म में बैठ कर कार्रवाई करती है, और मिस्ल सूरज और चाँद वग़ैरा बे-शुमार अर्से से उनका ज़हूर और क़याम चला आता है

और बे-शुमार अर्से तक जारी रहेगा। इसी तरह इस मंडल के ऊपर और मंडल मालूम होते हैं। और क़ानून क़ुदरत को निज़ाम फ़लकी और ज़मीनी यानी ऊँचे और नीचे देश की रचना के बन्दोबस्त में देख कर साबित होता है कि उनका बन्दोबस्त मुक़र्रर किये हुए क़ायदों के मुवाफ़िक़ जारी है, और बे-शुमार अर्से से ऐसा ही चला आया है और जारी रहेगा, और इस दुनिया के बन्दोबस्त में भी कोई न कोई अफ़सर और कारकुन की मार्फ़त कार्रवाई जारी होती है। इसी तरह घर का बन्दोबस्त भी किसी घर के बड़े की मार्फ़त जारी होता है। और जो कि इस दुनिया की कार्रवाई ऊपर की रचना की छाया यानी अक्स और नक़ल समझी जाती है, इस सबब से मुमकिन नहीं है कि ऊँचे देश की रचना का बन्दोबस्त और इसी तरह कुल्ल रचना का बन्दोबस्त बग़ैर किसी अफ़सर या मालिक के जारी होवे। अल्ब्त्ता एक के ऊपर एक अफ़सर या मालिक मुक़र्रर हैं, और सब के परे, और सब के ऊपर, कुल्ल मालिक का देश और तख़्त है। वहाँ से आदि में रचना की कार्रवाई शुरू हुई और सब बन्दोबस्त और क़ायदे वहीं से मुक़र्रर होते चले आये। और जो कि कुल्ल रचना के हर एक क़िस्म और चीज़ के बनाने में इरादा और मतलब और क़ुदरत और कारीगरी पाई जाती है (जो समर्थ कर्त्ता की मौजूदगी के गवाह हैं), फिर जो कोई रचना को आप से आप, बग़ैर किसी कर्त्ता

के मानते हैं, वह सरीह ग़लती में पड़े हुए हैं, पर अपनी मन-हठ से इस बात के क़ायल नहीं होना चाहते। सो इसका फल उनको, वक़्त सख़्त तकलीफ़ के, इस ज़िन्दगी में, या वक़्त छोड़ने इस देह के, मालूम पड़ेगा।

११७–बहुत से मुआमले तसदीक़ किये हुए ऐसे हैं कि जहाँ एक शख़्स ने पैदा हो कर अपने पिछले जन्म का हाल बयान किया और जो उसके कलाम की तसदीक़ उसके पिछले जन्म की सकूनत (रहने की जगह) से की गई तो सब बातें दुरुस्त निकलीं। फिर जो यह लोग रूह सुरत का मरते वक़्त अभाव मानते हैं, निहायत ग़लती करते हैं। ज़्यादा इस मुआमले को यहाँ तूल करना मुनासिब नहीं। जिस क़दर लिखा गया है, उसी क़दर समझवार सतसंगी खोजी के वास्ते काफ़ी है। और जो लोग वाद विवाद करें, वह किसी दलील से क़ायल नहीं होवेंगे, उनसे बात-चीत करना फ़िज़ूल है।

१६–समाजों की परमार्थी कार्रवाई

११८–जो समाज जहाँ-तहाँ आज-कल जारी हैं, उनके आचार्य, विद्यावान और बुद्धिमान हुए। उन्होंने हालत इस वक़्त के जीवों की देख कर कि खान-पान और आज़ादगी की ख़्वाहिश से अपने मत को छोड़ कर ग़ैर मत में शामिल होते चले जाते हैं या इरादा शामिल होने का रखते हैं, इस सबब से मुनासिब और मसलहत वक़्त

समझ कर क़रीब २ वेदांत शास्त्र के क़ायदे और उसूल के मुवाफ़िक़ नया मत खड़ा किया कि उसमें हर तरह की आज़ादगी खान-पान वग़ैरा और शादी व्यवहार की मिस्ल ईसाई मत वालों के, जीवों को दे दी। और जो ज़ाहिरी रसूम कि पुराने वक़्तों से जारी हैं, और उनको लोग अपने मज़हब का एक अंग समझते हैं, और उनके जारी रहने में इस ज़माने में सिवाय हर्ज और तकलीफ़ के कोई ख़ास दुनियावी या परमार्थी फ़ायदा नज़र नहीं आता, उनकी क़ैद छुड़ा दी। और एक मालिक का जिसको मुताबिक़ वेदांत शास्त्र के, ब्रह्म कहते हैं, इष्ट बँधवा कर, उसकी स्तुति और महिमा और शुकराने के भजन या बानी का पढ़ना या गाना जारी किया, और नक़ल यानी मूर्ति वग़ैरा बना कर पूजा करने को मना और निषेध किया और तीर्थ-व्रत और औतार और देवताओं की पूजा (मूर्तियाँ बना कर) जो कसरत से जारी थी, मौक़ूफ़ कर दी। और जो कोई ज़्यादा शौक़ वाले मालूम हुए, उनको, वास्ते प्राणायाम यानी अष्टांग योग के अभ्यास करने की हिदायत की। लेकिन जो कि यह अभ्यास निहायत कठिन और उसके संजम भी बहुत कठिन हैं, इसका सच्चा अभ्यासी उनके बेड़े में ज़ाहिरा कोई नज़र नहीं आता। और कोई २ ब्रह्म को आकाशवत व्यापक मान कर उसका ध्यान आँख बन्द करके या खुली आँखों से, बग़ैर मुक़र्रर करने किसी ख़ास

मुक़ाम के, अंतर या बाहर में करते हैं। इस अभ्यास से थोड़ी सफ़ाई होती है। और जो कोई प्रेम सहित बानी का पाठ करते हैं या भजन गाते हैं, तो वह भी उस वक़्त किसी क़दर अपने मन में गद २ होकर प्रेम की हालत में थोड़ा देर के वास्ते भर जाते हैं। मगर वह हालत ज़्यादा ठहराऊ नहीं होती और न उसकी तरक़्क़ी सिर्फ़ इसी क़दर कार्रवाई से मुमकिन है। इन समाजों में सिर्फ़ इसी क़दर साधन वास्ते प्राप्ति मुक्ति के जारी हैं।

११९—ये सब कुल्ल और सच्चे मालिक के भेद, और अंतर में मन और सुरत के चढ़ाने के अभ्यास से, बिलकुल बे-खबर हैं। और इस सबब से उन जीवों का, जो इन समाजों में शामिल हैं, सच्चा उद्धार बल्कि किसी ऊँचे दरजे का भी उद्धार या मुक्ति मुमकिन नहीं। बहुत से लोग तो इन समाजों में सिर्फ़ नामवरी और दुनिया की कार्रवाई या आज़ादी के हासिल करने के लिये शामिल होते हैं, और असल में परमार्थ की चाह उनके दिल में बिलकुल नहीं मालूम होती है।

१२०—एक नुक़्स (कसर) इन समाजों में और भी है कि वे गुरु की ज़रूरत नहीं समझते, और न पूरे गुरु की खोज करते हैं। सबब इसका यह है कि इनके मत में भेद और अभ्यास नहीं है। और इसी सबब से इनको ज़रूरत

पूरे गुरु की मदद की नहीं होती, क्योंकि इनके मत में सिर्फ़ किताबों का पढ़ना और पढ़ाना या भजन वग़ैरा का गाना जारी है, और इनकी किताबों में भेद रास्ते या तरकीब अभ्यास अंदरूनी (अंतरी) का कोई ज़िक्र नहीं है, कि जिस के वास्ते, ज़रूरत दरियाफ़्त की, भेदी और अभ्यासी से, होवे। बल्कि उन में तारीख़ी हाल या महिमा और सिफ़त मालिक की, या मसले इल्मी और अक़्ली, या हाल तत्वों और गुनों का, जो स्थूल रचना की कार्रवाई कर रहे हैं, दर्ज है। इस सबब से जिस किसी ने थोड़ी-बहुत रस्मी विद्या हासिल की है, वह भी उन किताबों को पढ़ कर उनका मतलब अपनी समझ के मुवाफ़िक़ समझ सकता है। यह लोग भेदी और अभ्यासी गुरु की क़दर नहीं जानते हैं, क्योंकि इनको अपने जीव के सच्चे उद्धार और अपने मालिक से मिलने की ख़्वाहिश बिलकुल नहीं है।

१२१—इसी तरह कर्म-काण्ड के शास्त्र भी सिर्फ़ बाहरी रस्मों, और उनकी कार्रवाई का ज़िक्र करते हैं, और इसी सबब से वहाँ भी पूरे गुरु की ज़रूरत नहीं है, सिर्फ़ विद्यावान गुरु, जो होम और यज्ञ वग़ैरा और जनम-मरन और दूसरे समय के कर्म, किताबों को पढ़ कर, कराते हैं, और जिन को वे आचार्य्य कहते हैं, काफ़ी समझा जाता है। और जो लोग आप थोड़ा-बहुत संस्कृत ज़बान से

वाक़फ़ियत रखते हैं, वे आप सब कार्रवाई किताबों को देख कर कर सकते हैं। यह लोग भी, यानी कर्मकाण्डी, पूरे गुरु की क़दर नहीं जानते, और न इनके मन में खोज सच्चे परमार्थ का है। सिर्फ़ कर्म करने से मुक्ति हासिल होने का यक़ीन करते हैं। मगर यह बात सही नहीं है, क्योंकि जब तक उपासना करके सच्चा ज्ञान हासिल न होगा, मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। और संतों के बचन के मुवाफ़िक़ यह मुक्ति भी ना-तमाम है। यानी पूरा और सच्चा उद्धार सच्चे ज्ञानियों का भी जिनको जोग अभ्यास करके ज्ञान प्राप्त हुआ है, नहीं होता है, जब तक कि संत मत के मुवाफ़िक़ अभ्यास करके पारब्रह्म पद के पार संत देश में न जावें। फिर कर्मकाण्डी और बाहरमुख उपासना, मूर्ति वग़ैरा की करने वालों को, सच्ची मुक्ति किस तरह हासिल हो सकती है ?

१२२—ऊपर के लिखे हुए से ज़ाहिर है कि वाचक ज्ञानी और समाज वाले और कर्मकाण्डी, घट के भेद से बिलकुल बे-खबर हैं और हरचंद उनके मत में शब्द की महिमा बहुत की है, और साफ़ लिखा है कि आदि में ओम शब्द प्रकट हुआ, और इसी शब्द से कुल्ल रचना पैदा हुई, और तीन लोक की रचना की ताक़त और मसाले का भंडार भी यही शब्द है, पर ये लोग शब्द का खोज नहीं करते, और न रचना का भेद दरियाफ्त करते हैं कि कैसे

ओम् शब्द से तीन लोक की रचना हुई। जो यह ख़्वाहिश इनके दिल में होती तो ज़रूर भेदी और अभ्यासी गुरु की ज़रूरत इनको पड़ती।

१२३—ज़रा ग़ौर करने से मालूम होगा, और वेद के उपनिषदों में भी लिखा है कि जब तक अभ्यासी ओम् शब्द यानी शब्द ब्रह्म को पहिले प्राप्त होकर उसके पार न जावेगा, तब तक वेद मत के मुवाफ़िक़ उद्धार न होगा, यानी अशब्द ब्रह्म की प्राप्ति नहीं होगी, क्योंकि ओम् शब्द को ही महातत्व कहते हैं, और वही तीन लोक की रचना के मसाले का भंडार है। फिर जब तक उसके पार न जावेगा, तीन लोक की रचना के घेर से न्यारा नहीं होगा। यह भेद जोगेश्वर-ज्ञानी जानते थे, और वे जोग-अभ्यास करके ओम् पद के पार पहुँचे। पर आज-कल के ज्ञानी इस रास्ते और भेद से बिल्कुल बे-ख़बर हैं, और उन को ख़्वाहिश उसके मालूम करने और योग-अभ्यास करने की नहीं है। सिर्फ़ अपनी विद्या और बुद्धि की समझ के मुवाफ़िक़ अपनी विदेह मुक्ति का यक़ीन करते हैं, यानी बाद मरने के, मुक्ति का हासिल होना, मानते हैं, और यह भारी ग़लती और भूल है और सच्चे जोगेश्वर-ज्ञानी और उपनिषदों के कलाम के बर-ख़िलाफ़ है।

१२४—रस्मी विद्या तो विद्यावान गुरु से हासिल हो सकती है। सो विद्यावान गुरु को यह सब मानते हैं। पर

ब्रह्म-ज्ञान वग़ैर ब्रह्म-नेष्ठी गुरु के हासिल नहीं हो सकता है। सच्चे ज्ञानियों ने तीन दरजे ब्रह्म-ज्ञानियों के मुक़र्रर किये हैं–ब्रह्मश्रोत्री, ब्रह्मनेष्ठी, ब्रह्मसंतुष्ठ। ब्रह्मश्रोती, विद्यावान ज्ञानी को कहते हैं। यह अव्वल सीढ़ी है। ऐसे ब्रह्मज्ञानी से जीव का कारज नहीं हो सकता, जब तक कि वह पढ़े और सुने के मुवाफ़िक़ नेष्ठा यानी अभ्यास न करे। ब्रह्मनेष्ठी, अभ्यासी को कहते हैं कि वह अभ्यास करके ब्रह्म पद में पहुँचना चाहता है। और ब्रह्मसंतुष्ठ, उसको कहते हैं कि जो ब्रह्म-पद को प्राप्त होकर शान्त स्वरूप हो गया।

१२५—अब ख़्याल करो कि जितने ज्ञानी आज कल नज़र आते हैं, वे सब विद्यावान हैं, यानी विद्या पढ़ कर उन्होंने ब्रह्म का निश्चय किया है। यह निश्चय इल्मी और अक़्ली है। जीव का कल्यान इससे नहीं हो सकता है, जब तक कि उस विद्या के मुवाफ़िक़ अमल यानी अभ्यास न किया जावेगा। और वह अभ्यास, अन्तरमुख उपासना ब्रह्म-पद की है, यानी प्रेम और भक्ति के साथ जो अभ्यास कि संतों ने इस वक़्त में जारी फ़रमाया है, उसकी कमाई करके पिण्ड देश से न्यारे होकर, ब्रह्माण्ड में चढ़ कर, पहुँचना, क्योंकि प्राणायाम का अभ्यास जो पिछले वक़्त में जारी था, जीवों से बिलकुल नहीं बन सकता है। उसके संजम वग़ैरा निहायत कठिन हैं।

१२६—इन मतों के अभ्यास की कमाई, वग़ैर मदद अभ्यासी यानी नेष्ठावान या संतुष्ट गुरू के, किसी तरह

मुमकिन नहीं है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि यह वाचक ज्ञानी सिर्फ़ विद्या में अटके रह गये, और अंतरमुख अभ्यास इन से नहीं बना। इस वास्ते इन्होंने अभ्यासी गुरू का खोज नहीं किया, और जो कोई ऐसा गुरू मिले तो उसके बचन को भी नहीं मानते और नहीं सुनते हैं। यह लोग साफ़ ख़िलाफ़ बचन सच्चे जोगेश्वर, वेदांती या ज्ञानी और वेद मत के, कार्रवाई कर रहे हैं, और फिर अपनी ग़लती और भूल के मन-हठ और अहंकार से क़ायल नहीं होते।

१२७—यही हाल कुल्ल मतों के लोगों का है कि अपने आचार्य्यों के बचन के बर-ख़िलाफ़ कार्रवाई कर रहे हैं, यानी नीचे के दरजे की बातों में अटक रहे हैं, या अपने मन और बुद्धि के वसीले से बाहरमुख पूजा ईजाद (नई जारी) करके, जीवों को उसमें भरमा रहे हैं, और अपने रोज़गार की ख़ातिर सच्ची बात को छिपाते चले आये हैं। यहाँ तक कि अब वे उन सच्ची बातों से आप भी बे-ख़बर रह गये, और जो कोई उन बातों को जनावे, उससे विरोध करते हैं। और बा-वजूदे कि आप अपने आचार्य्यों के बचन से ग़ाफ़िल और बे-ख़बर हैं, उलटा उस समझाने वाले को निन्दक क़रार देकर, आम जीवों को उलटे बचन सुना कर, सच्चे रास्ते पर चलने से बाज़ रखते हैं। यानी इन्होंने अपना अकाज किया और औरों का भी अकाज करते हैं।

१२८—सच्चे परमार्थी को ऐसे लोगों और बाहरमुखी पूजा वालों के संग से क़तई परहेज़ करना चाहिए और उनके बचनों को सुनना नहीं चाहिए, बल्कि नेष्ठावान या अभ्यासी गुरु से (और जो मिल जावे तो संतुष्ट गुरु से) मिल कर उनसे अभ्यास की जुगत दरियाफ़्त करे, और जिस क़दर बन सके अभ्यास करके अपने अंतर में आनंद हासिल करना और जीते-जी अपनी मुक्ति होती हुई देखना चाहिए।

१७—संत सतगुरु और साधगुरु की पहिचान

१२९—राधास्वामी मत में संत सतगुरु या साधगुरु की खास पहिचान यह रक्खी है—

(१) यह कि सुरत-शब्द मार्ग के भेदी और अभ्यासी होवें, और घट का भेद और जुगत अभ्यास की, मय नाम स्थानों और शब्दों के समझाते होवें, और सिवाय इसके, दूसरे क़िस्म के अभ्यास की हिदायत न करते होवें।

(२) यह कि दर्दी खोजी को, फ़ौरन बचन सुन कर और अभ्यासियों की हालत देख कर, दिल में शान्ति और आनंद पैदा होगा, और जिस क़दर उसके संशय और संदेह दूर होते जावेंगे, और प्रश्नों के पूरे जवाब मिलते जावेंगे, उसी क़दर उसकी प्रीत और प्रतीत, संत सतगुरु या साधगुरु के चरनों में, बढ़ती जावेगी और अंतर में

राधास्वामी दयाल की दया के परचे पाकर, यक़ीन मजबूत होता जावेगा, और प्रेम दिन २ बढ़ता जावेगा। इससे बढ़कर, यानी बचन और भेद से ज़्यादा, कोई पहिचान नहीं है कि जिससे सच्चे परमार्थी के दिल में थोड़ा-बहुत यक़ीन पैदा होवे कि यहाँ से मेरा परमार्थी काम बनेगा।

(३) यह कि जो कोई कुछ अर्से तक उनका रात-दिन सतसंग करे, और उनकी रहनी और गहनी और बोलचाल और व्यवहार और बर्ताव को देखे, तो उसके मन में दिन २ इस बात का यक़ीन होता जावेगा कि वे ज़रूर पूरे अभ्यासी हैं, और रहनी उनकी सतोगुनी है, और उसका परमार्थ उनके वसीले से ज़रूर बन जावेगा। सिवाय इसके और जो कोई पहिचान है, वह सिवाय सुरत-शब्द अभ्यासी के दूसरा नहीं परख सकता है, क्योंकि अभ्यासी की हालत को अभ्यासी ही परख और समझ सकता है, दूसरे की ताक़त नहीं है।

१३१—जो कोई पुरानी किताबों के मुवाफ़िक़ महात्माओं के लक्षण पढ़ कर, किसी महात्मा या अभ्यासी की पहिचान किया चाहें, तो उनको हरगिज़ पहिचान नहीं आवेगी, क्योंकि जो काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार और मन और इन्द्रियों के चक्कर में आप पड़े हैं, और मालिक के भेद, और उसके मिलने की जुगत से बेख़बर हैं, उनकी क्या ताक़त है कि जो इनके चक्कर से

न्यारे बर्त रहे हैं या इन क़ुव्वतों पर किसी क़दर सवार हैं, यानी उनको अपने क़ाबू में लाये हैं, उनकी हालत की थोड़ी-बहुत परख और पहिचान कर सकें ? ऐसे लोग हमेशा धोखा खाते हैं और धोखा खावेंगे ।

१३१—इस वास्ते सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि पहिले सिर्फ़ वचन की पहिचान करे, यानी जिनके दर्शन और बचन और संग से कुल्ल मालिक के चरनों में भय और भाव पैदा होवे, और परमार्थ की क़दर और बड़ाई चित्त में समावे, और दुनिया और उसके सामान दिन २ ओछे और रूखे और फीके मालूम होते जावें, और जिन चीज़ों और बातों में कि संसारी जीव अटके और फँसे हुए हैं, उनसे उसकी तबियत आहिस्ता २ हटती जावे, तो जानना और समझना चाहिए कि ऐसों के संग और उपदेश से ज़रूर एक दिन, संसार और उसके बंधनों से, छुटकारा हो जावेगा और परम पद और परम आनंद की प्राप्ति हो जावेगी । इससे ज़्यादा हाल उनके अभ्यास और उनकी गति का जब तक कि यह आप कोई दिन अभ्यास न करेगा, तब तक नहीं मालूम होगा ।

१३२—फिर उन्हीं का कोई दिन सतसंग करे, और जब उनकी रहनी और बर्ताव थोड़ा-बहुत देख ले, तब उन में अपना गुरु-भाव लावे, और जिस क़दर बने, उनकी आज्ञा अनुसार, कार्रवाई परमार्थ की करे, और जिस बात में

कसर पड़े, उसके दूर होने के वास्ते उनकी और राधास्वामी दयाल की दया माँगता रहे। रफ़्ता २ एक दिन उसका कारज सिद्ध हो जावेगा।

१८–सच्चे परमार्थी के थोड़े-बहुत लक्षण और स्वभाव यहाँ लिखे जाते हैं

१३३–हर एक परमार्थी को चाहिए कि इन लक्षणों के मुवाफ़िक़ अपने मन के हाल और चाल को परखता चले :–

(१) परमार्थी का मन कोमल और चित्त मुलायम होना चाहिए, ताकि किसी के साथ सख़्ती न करे, और दुखिया का दुख, तवज्जह से सुन कर, जो बन सके तो अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ उसकी मदद करे, नहीं तो उसकी हमदर्दी, ग़म-ख़्वारी और दिलदारी करे।

(२) परमार्थ की चाह सच्ची होवे, और सच्चे परमार्थ का खोज बराबर जारी रहे, और जब उसका पता लग जावे, तब, वाद-विवाद और पक्षपात छोड़ कर, उसको दिल से क़बूल करके, जो अभ्यास कि उसके हासिल करने के वास्ते बताया जावे, उसकी, सच्चे मन से कार्रवाई करे।

(३) कुल्ल मालिक की मौजूदगी का पूरा यक़ीन मन में होवे, और उसकी भक्ति करने के वास्ते नई २ उमंग मन में उठती रहे।

(४) जो कोई सच्चे कुल्ल मालिक का पता और भेद सुनावे, वह शख़्स प्यारा लगे, और दीनता के साथ उसका संग बारम्बार करे, और उससे पूरा भेद और जुक्ति लेकर, जिस क़दर जल्दी बने, अभ्यास शुरू करके, अपने अंतर में थोड़ा-बहुत रस और आनन्द लेवे।

(५) क्षमा और बरदाश्त करना उसकी आदत हो जावे, और जहाँ तक मुमकिन होवे, किसी से गुस्सा या तकरार या झगड़ा न करे।

(६) संसारी लोग और माया के पदार्थों से, मन में किसी क़दर नफ़रत होवे, यानी इनसे मिलने में मन राज़ी और ख़ुश न होवे।

(७) सच्चे परमार्थ की कार्रवाई में संसारी लोगों का ख़ौफ़ और शर्म न करने का इरादा रक्खे, और जिस क़दर बने, इसी मुवाफ़िक़ बर्ताव शुरू करे।

(८) सच्चे मालिक की भक्ति तन, मन और धन से शौक़ के साथ करने की चाह बनी रहे, और जिस क़दर बन सके, उसकी कार्रवाई जारी करे।

(९) गुरू और मालिक की प्रसन्नता की, औरों की प्रसन्नता पर, जहाँ तक मुमकिन होवे, मुख्यता रक्खे।

(१०) मन और इन्द्रियों को, शौक़ के साथ, जिस क़दर बने, क़ाबू में लाने का इरादा मज़बूत रक्खे।

(११ जो काम या चाल या रस्म कि उसके परमार्थ

की कार्रवाई में विघ्नकारक होवें, उनसे जिस क़दर बने बचाव करे।

(१२) निंदक लोगों के बचन सुन कर, विचार के साथ, कार्रवाई करे, और ग़ौर करके समझे और विचारे कि उनकी निंदा किस क़दर ग़लत और किस क़दर सही है, और जो सही है उसमें क्या नुक़सान है, या यह कि परमार्थी फ़ायदा उसमें किस क़दर है, और जो अपनी समझ में कोई बात ब-ख़ूबी न आवे तो प्रेमी सतसंगी से उसका हाल अलेहदगी में दरियाफ़्त करके अपना इतमीनान और तसल्ली करे।

(१३) किसी तरह का अहंकार या मान, ज़ात-पाँत और धन और हुकूमत और गुन वग़ैरा का, अपने मन में, परमार्थी कार्रवाई और सतसंग में न रक्खे।

(१४) अपनी कसरों और औगुनों का ख़्याल करके, आपको निबल और ना-चीज़ और ना-कारा देखता और समझता रहे, और हर एक से प्यार और दीनता के साथ बर्ताव करे, और उन कसरों के दूर करने की बराबर कोशिश जारी रक्खे।

(१५) जहाँ तक बने, ईर्षा और विरोध और क्रोध को अपने मन में न आने देवे, और किसी की बुराई-भलाई दूसरे से, उसकी ग़ीबत में (पीठ पीछे) न करे, और न दूसरों की बुराई सुनने की आदत रक्खे।

(१६) बे-फ़ायदा लोभ और लालच न करे, और बग़ैर ज़रूरत के, दूसरे से कोई पदार्थ न माँगे और न लेवे।

(१७) अपनी मान-बड़ाई के वास्ते कोई काम दिखावे का न करे। परमार्थ में ऐसी करतूत निष्फल समझी जाती है। जो काम या सेवा करे, वह गुरु और मालिक की प्रसन्नता के वास्ते, निर अहंकार और चित्त में दीनता रख कर, करे।

१६--राधास्वामी मत के अभ्यासी को इन संजमों की सम्हाल रखना चाहिए

१३४—जो कोई राधास्वामी मत में शामिल होवे और उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास शुरू करे, उसको, सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास दुरुस्ता से करने के वास्ते यह संजम दरकार हैं :—

(१) मांस-अहार न करे, और न कोई नशे की चीज़ पीवे या खावे। हुक़्क़ा पीना नशे में दाख़िल नहीं है।

(२) मामूली खाने से आहिस्ता २ क़रीब चौथाई हिस्से के कम कर देवे, और बहुत चिकने चुपड़े और स्वाद के भोजन ज़्यादा न खावे।

(३) सोवने में भी कुछ कमी करे, यानी आम तौर पर छः घंटे से ज़्यादा न सोवे।

(४) संसारी लोगों से ज़रूरत के मुवाफ़िक़ मेल और बर्ताव करे। उनसे ज़्यादा मेल न रक्खे, और बग़ैर ज़रूरत के, किसी के संसारी मुआमले में दख़ल न देवे।

(५) संसारी पदार्थ और इन्द्रियों के भोगों की चाह फ़िज़ूल न उठावे और न उनके वास्ते फ़िज़ूल जतन करे, बल्कि जो भोग और पदार्थ मुयस्सर आवें, उनमें भी जिस क़दर मुनासिब होवे, एहतियात के साथ वर्ताब करे।

(६) वक़्त अभ्यास के, बे-फ़ायदा, ख़्याल दुनिया और उसके पदार्थों और भोगों के, न उठावे, और जो पुरानी आदत के मुवाफ़िक़ ऐसी गुनावन मन में पैदा होवे, तो उसको, जिस क़दर जल्दी बने, दूर हटावे, नहीं तो अभ्यास में रस नहीं मिलेगा।

(७) सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल और गुरु का किसी किसी क़दर ख़ौफ़ दिल में रक्खे, और उनकी प्रसन्नता में अपनी बेहतरी समझे, और नाराज़ी में नुक़सान, परमार्थ और स्वार्थ का। और उनके चरनों में दिन २ प्रीत और प्रतीत बढ़ाता रहे।

(८) जहाँ तक मुमकिन होवे किसी जीव से विरोध और ईर्षा दिल में न रक्खे।

(९) पुण्य-कर्म, मुवाफ़िक़ दफ़ा ८५ से ८९ तक के, जिस क़दर बन सके, करे, और पाप-कर्म से, जहाँ तक बने, बचता रहे।

(१०) राधास्वामी दयाल की दया का, हर दम भरोसा मन में रख कर, अपना अभ्यास नेम से हर रोज़, दो बार या ज़्यादा, करता रहे, और पोथियों का भी थोड़ा पाठ किया करे कि उससे अभ्यास और मन और इन्द्रियों की दुरुस्ती में मदद मिलेगी।

(११) सतसंग में शामिल होने का हमेशा शौक़ रक्खे और जब मौज से मौक़ा मिले, तब चेत कर होशियारी से बचन सुने, और उनका मनन करके अपने लायक़ के बचन छाँट कर, उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई और बर्ताव शुरू करे।

(१२) अपने मन और इंद्रियों की चाल को निरखता चले, यानी मन की चौकीदारी करे कि नाक़िस और पाप कर्मों और ख़्यालों में न जावे, और जहाँ तक बने मन और माया के हाथ से धोखा न खावे।

(१३) सच्चे परमार्थी यानी प्रेमी जन से मोहब्बत करे, और जब वे मिल जावें, तो शौक़ के साथ उनका संग और ख़ातिरदारी, और जो मौक़ा होवे, तो मेहमानदारी करे।

(१४) अपने वक़्त का ख़्याल रक्खे कि जहाँ तक मुमकिन होवे, फ़िज़ूल और बे-फ़ायदा कामों और बातों में मुफ़्त ख़र्च न होने पावे।

(१५) जब कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल को सर्व-समर्थ और सर्वज्ञ समझा तो जो कुछ कि स्वार्थ

और परमार्थ के मुआमले में पेश आवे, उसको उनकी मौज समझना चाहिये, और चाहे वह मन के मुवाफ़िक़ होवे या नहीं, उस मौज के साथ मुवाफ़िक़त करना चाहिये, यानी तकलीफ़ को धीरज के साथ बरदाश्त करना चाहिये, और तरक़्क़ी यानी सुख में परमार्थ से ग़ाफ़िल होना नहीं चाहिये ।

ख़ुलासा कुल्ल बचन का

१३५–जो कि यह बचन बहुत तूल यानी लम्बा हो गया है, इस वास्ते मुनासिब है कि इसका ख़ुलासा थोड़ा दफ़्तों में लिख दिया जावे, ताकि असली मतलब इस बचन का, पढ़ने वालों की समझ में, जल्द आजावे और थोड़ा-बहुत याद रहे :–

(१) राधास्वामी मत सत्त मत है ।

(२) राधास्वामी नाम कुल्ल और सच्चे मालिक का नाम है ।

(३) यह नाम किसी ने नहीं धरा । इसकी धुन आप हर एक स्थान पर हो रही है, यानी यह ध्वन्यात्मक नाम है, और इसको संत और साध जन और प्रेमी अभ्यासी सुनते हैं ।

(४) "राधा" नाम आदि-धार का है, जो कुल्ल मालिक यानी स्वामी के चरन से निकली । और "स्वामी" नाम शब्द का है, जिसमें से धुन या धार निकली और वही

धुन या धार सुरत है। इस वास्ते "राधास्वामी" नाम के अर्थ सुरत-शब्द के समझने चाहिये।

(५) जब तक कोई इस नाम को, मय इस के भेद के, अपने हिरदे में नहीं बसावेगा, तब तक उसको अभ्यास में पूरे तौर से मदद नहीं मिलेगी, और न धुर मुक़ाम तक का रास्ता निर्विघ्न तै कर सकेगा।

(६ आदि-धार जो राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक के चरनों से निकली, वही नूर और जान और शब्द की धार है। और उसी ने जगह २ ठहर कर, और मंडल बाँध कर, सत्तलोक तक रचना करी, और फिर वहाँ से दो धारों ने, यानी निरंजन और जोत ने, उतर कर ब्रह्माण्ड की रचना, और सहसदल कँवल से तीनों धारों ने (जिनको सतोगुन, रजोगुन और तमोगुन कहते हैं) उतर कर, पिंड देश की रचना करी। खुलासा यह है कि कुल्ल रचना शब्द की धार ने करी है, और शब्द ही कुल्ल मालिक का प्रथम ज़हूरा यानी प्रकाश है, और सब जगह शब्द ही चैतन्य का निशान और ज़हूरा है।

(७) शब्द की धुन या धार का नाम सुरत है, और यह दोनों यानी सुरत और शब्द कुल्ल रचना और उसकी कार्रवाई कर रहे हैं।

(८) इस लोक में भी कुल्ल काम शब्द (यानी बोलने वाला) और सुरत (यानी सुनने वाला) कर रहे हैं।

(९) जब बच्चा पैदा होता है और उसने शब्द किया, यानी रोया, तो ज़िन्दा है, और जब तक आदमी बोलता है तो ज़िन्दा है, नहीं तो मुर्दा है।

(१०) सुरत की धार उतर कर, दोनों आँखों के मध्य में, अंदर की तरफ़, छठे चक्र के स्थान पर, इस जिस्म यानी देह में ठहरी है, और वहीं से दो धार होकर, दोनों आँखों में, जाग्रत के वक़्त, बैठ कर इस लोक में मन और इन्द्रियों के वसीले से कार्रवाई करती है।

(११) सुरत-चैतन्य सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की अंश है, और मन, निरंजन यानी कालपुरुष या ब्रह्म की अंश है, और इंद्रियाँ और देह, माया की अंश हैं, यानी उसके मसाले से बनी हुई हैं।

(१२) आँखों के स्थान से, सुरत की धार को, घर की तरफ़ यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में, विरह और प्रेम अंग लेकर उलटाना चाहिये, तब सच्चा और पूरा उद्धार होगा, और इसी कार्रवाई का नाम सच्चा परमार्थ है।

(१३) इसी उलटाने को सुरत-शब्द का अभ्यास कहते हैं, और असली मतलब राधास्वामी मत का यही है कि जीव यानी सुरत को जो सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के चरनों से जुगान-जुग से जुदा हो गई है, और यहाँ देह और मन और इन्द्रियों का संग करके दुख-सुख भोग रही

है, फिर उलटा कर उसके निज घर में, जो महा प्रेम और महा आनन्द का आदि, भंडार है, और जहाँ काल, कलेश और माया का बीज भी नहीं है, पहुँचाना, ताकि अमर, अजर और महा सुखी हो जावे और जनम-मरन और देहियों के दुख-सुख के कलेश से, उसका हमेशा को बचाव हो जावे।

(१४) कुल्ल रचना के तीन दरजे हैं। पहिला, निरमल-चैतन्य देश और इसी को संत देश और दयाल देश कहते हैं। यहाँ माया बिलकुल नहीं है। और इसी सबब से यह देश अमर और अजर है और महा सुख और परम आनन्द का भंडार है। दूसरा, निरमल-चैतन्य और शुद्ध-माया देश। इसी दरजे के शुरू में माया का ज़हूर हुआ, लेकिन इस दरजे में वह निहायत लतीफ़ है। इसको ब्रह्माण्ड कहते हैं। तीसरा, निरमल-चैतन्य और मलीन-माया देश। यहाँ, मलीनता ज़्यादा है और यहाँ की रचना भी इस वास्ते स्थूल है। इस दरजे को पिंड-देश कहते हैं।

(१५) जिस वक़्त पुतली आँखों की ज़रा चढ़ जाती है, आदमी फ़ौरन बे-होश हो जाता है, और जब ज़्यादा खिंच जाती है, तब मर जाता है। तो इससे ज़ाहिर है कि देही और मन और इन्द्रियों और संसार के बंधनों से छुटकारा, इसी रास्ते से, सुरत के उलटाने यानी चढ़ाने से

मुमकिन है, यानी सच्ची मुक्ति और उद्धार इसी जुगत की कमाई से मुमकिन है, और किसी तरह नहीं।

(१६) जिस क़दर बाहरमुख करनी परमार्थ के नाम से अन्य मतों में जारी है, वह असल में मुक्ति का साधन नहीं है, बल्कि सब भर्म है।

(१७) और जो कोई साधन प्राणों के साथ या किसी और धार के साथ चढ़ाई का है, पहिले तो वह ऐसा कठिन है कि किसी से बन नहीं सकता। और जो किसी बिरले जीव से बन भी गया, तो वह अभ्यासी माया के घेर से बाहर नहीं जावेगा। क्योंकि सिवाय शब्द की धार के और सब धारें जिस क़दर कि हैं, वे ब्रह्माण्ड से जारी हुई हैं, यानी जहाँ से कि माया का ज़हूर होकर माया और चैतन्य ने मिल कर रचना करी है। इस सबब से, जो कोई इन धारों पर सवार होकर चलेगा, वह माया के घेर में रहेगा, और देह के बंधनों और जनम-मरन से उसका छुटकारा नहीं होगा।

(१८) माया, सुरत-चैतन्य की धार का ख़ोल और ग़िलाफ़ हो रही है, यानी जिस क़दर माया में सूक्ष्म और स्थूल वग़ैरा दरजे हैं, उसी क़दर ग़िलाफ़, सुरत पर, चढ़े हुए हैं, और यही ग़िलाफ़ या ख़ोल देही कहलाते हैं, और इन्हीं ग़िलाफ़ों का, सुरत के वियोग यानी जुदाई से, बेकार हो जाने का नाम मौत है। इस वास्ते, जब तक सुरत,

माया के देश में रहेगी, तब तक ग़िलाफ़ में रहेगी, और इस सबब से जनम-मरन उसका चाहे जल्दी होवे या देर से, जारी रहेगा। इस वास्ते, संत फ़रमाते हैं कि जब तक सुरत, संत देश अथवा दयाल देश यानी निर्मल-चैतन्य देश में जहाँ माया बिल्कुल नहीं है, न पहुँचेगी, तब तक सच्चा और पूरा उद्धार न होगा।

(१६) यह उद्धार, सिर्फ़ सतगुरु और शब्द भक्ति से हो सकता है। और किसी की भक्ति या दूसरे क़िस्म के अभ्यास से हासिल नहीं हो सकता है। और संत मत के अभ्यासी को प्रेम और शौक़ के साथ करनी शुरू करना मुनासिब है, क्योंकि बग़ैर प्रेम और शौक़ के, अभ्यास में आसानी नहीं होवेगी, और जैसा चाहिये रस भी नहीं आवेगा।

(२०) हर एक आदमी को, चाहे औरत होवे या मर्द, वास्ते अपने सच्चे और पूरे उद्धार के, सुरत-शब्द का अभ्यास करना ज़रूर और मुनासिब है, और इसी को सच्चा परमार्थ कहते हैं। बाक़ी जिस क़दर बाहमुख पूजा और अभ्यास है, जिसका अंतर से सिलसिला नहीं लगा हुआ है, वह भर्म है। उस से जीव का सच्चा और पूरा कल्यान नहीं होगा। अलबत्ता शुभ कर्म का फल मिलेगा, यानी थोड़े अरसे के वास्ते सुख-स्थान मिल जावेगा, और जो अशुभ कर्म बनेगा, उसके एवज़ में दुख भोगना पड़ेगा।

(२१) कर्म का स्थान आँखों का मुक़ाम है। यानी जब सुरत, जाग्रत अवस्था में आंखों के स्थान पर बैठती है, तब मन और इन्द्रियों से बाहरमुखी करतूत बनती है। और संत फ़रमाते हैं कि जैसे बने, जीव को चाहिये कि भक्ति और अभ्यास करके, आँखों के स्थान से, आहिस्ता २ सरकता जावे, यानी ऊपर और अंदर की तरफ़ चलना शुरू, करे तो जिस क़दर चाल चलेगी, उसी क़दर, कर्म थकता और घटता जावेगा, और रफ़्ता २ एक दिन यह जीव निःकर्म हो जावेगा।

(२२) संतों ने कर्म की दो क़िस्म करी हैं। एक, जो इस जीव की ज़ात यानी आपे से ताल्लुक़ रखता है और दूसरा, जिसका ताल्लुक़ औरों के साथ व्यवहार में है। पहिली क़िस्म यह है कि जो करतूत करके यह जीव अपने मालिक के नज़दीक़ पहुंचता जावे, वह असली यानी परमार्थी शुभ कर्म है, और जो करतूत कि इसको अपने मालिक के चरनों से दूर डाले, वही असली यानी परमार्थी अशुभ कर्म है। दूसरी क़िस्म यह है कि औरों के साथ मन, बचन और कर्म करके इस तरह बर्ताव करे कि जैसे यह जीव चाहता है कि और लोग, इसके साथ, बर्ताव करें। यह व्यवहारी शुभ कर्म है, और इसके ख़िलाफ़ बर्ताव करना, व्यवहारी अशुभ कर्म है। परमार्थी जीवों को मुनासिब है कि ऊपर के क़ायदे के

मुवाफ़िक़ अपने ज़ाती और व्यवहारी कर्म को दुरुस्ती से बर्ताव करें।

(२३) और मतों में बाहरमुखी कर्म का बहुत विस्तार किया है। सबब इसका यह है कि सच्चे और कुल्ल मालिक की भक्ति की रीत और महिमा उन को मालूम नहीं हुई, और न सुरत-शब्द अभ्यास की ख़बर हुई, कि जिससे जीव-बहुत जल्द कर्म के घेर से निकल कर, अपने निज घर की तरफ़ जा सकता है। और जो कर्मों के बखेड़े में पड़ा रहा तो चाहे उस से व्यवहारी शुभ कर्म बने या अशुभ, उसका हिसाब काल और माया के संग कभी बेबाक़ नहीं हो सकता है, और इस वास्ते जनम-मरन और दुख-सुख के फंदे से रिहाई मुमकिन नहीं है।

(२४) जिन मतों में कि सिर्फ़ बाहरमुखी पूजा या पोथियों का पढ़ना और पढ़ाना जारी है, और घट के भेद से बे-ख़बरी है, उनकी कुल्ल कार्रवाई व्यवहारी शुभ या अशुभ कर्म में दाख़िल है। उससे मुक्ति हासिल नहीं हो सकती।

(२५) और जिन मतों में थोड़ा अंतर अभ्यास जारी है, और वह वर्णात्मक नाम का सुमिरन या ध्यान किसी देवता या औतार या परमेश्वर का, या मुद्रा का साधन है, और स्थान उस अभ्यास का छः चक्र के अंदर है, और संतों के धाम का भेद मालूम नहीं है, तो भी वह

सच्ची मुक्ति का साधन नहीं है। अलबत्ता सुख-स्थान कुछ काल के वास्ते मिलेगा और फिर जनम-मरन के चक्कर में आना पड़ेगा।

(२६) जो लोग कि ज्ञानी या वेदान्ती या सूफ़ी कहलाते हैं, और अपने को ब्रह्म मानते हैं, पर कोई अभ्यास ब्रह्म-पद में पहुँचने का नहीं करते, और न ब्रह्म-पद और उसके रास्ते के भेद से वाक़िफ़ हैं, वे भी जनम-मरन के चक्कर से नहीं बच सकते। ऐसा ज्ञान, वाचक कहलाता है। बग़ैर संतों के अभ्यास के मुवाफ़िक़ मन और सुरत की चढ़ाई के, हालत नहीं बदल सकती, और न ब्रह्म-पद की प्राप्ति हो सकती है, क्योंकि प्राणायाम का अभ्यास ब-सबब उसकी कठिनता के ख़ारिज है, और कोई दूसरे अभ्यास से यह मतलब हासिल नहीं हो सकता। और यह वाचक ज्ञानी और सूफ़ी, अपनी विद्या और बुद्धि के अहंकार में, संतों का बचन नहीं मानते, इस सबब से ख़ाली रह गये।

(२७) नास्तिक और और मत जो विद्यावानों ने जारी किये हैं, इन में तो कोई परमार्थी बात नहीं है। सिर्फ़ पर-उपकार का उपदेश है और कुल्ल मालिक की मौजूदगी से इनकार है। फिर यह लोग क्या भक्ति और अभ्यास कर सकते हैं? इस वास्ते इनका उद्धार किसी तरह मुमकिन नहीं है।

(२८) रचना का हाल ग़ौर से नज़र करने से साफ़ ज़ाहिर होता है कि कोई कुल्ल और सच्चा मालिक ज़रूर

है, क्योंकि हर एक चीज़ से कारीगरी और मतलब और इरादा, समर्थ बनाने वाले का, ज़ाहिर है, और यह जीव उसी कुल्ल मालिक समर्थ दयाल की अंस है, यानी उसका, और जीव का जौहर एक ही है। फिर जो लोग कि इस बात को नहीं मानते हैं, वे अपना भारी नुक़सान करते हैं और अंत को बहुत पछतावेंगे।

(२९) जो लोग कि तीर्थ-व्रत और मूर्ति-मंदर और औतारों और देवताओं की पूजा में अटक रहे हैं, और घट के भेद और संत मत की जुक्ति से बे-ख़बर हैं, और न उस की तलाश और खोज करते हैं, उनका भी सच्चा उद्धार नहीं हो सकता। वे, कर्म का फल अलबत्ता पावेंगे, पर सच्चे मालिक के दरबार में नहीं पहुँच सकते, बल्कि उस औतार और देवता के असल रूप का भी, जैसा कि उसके लोक में है, दर्शन नहीं मिलेगा, क्योंकि अपनी जिंदगी में असल का खोज नहीं किया। फिर मरने के बाद भी नक़ल का ही दर्शन पावेंगे, बशर्ते कि सच्ची लगन और किसी क़दर प्रतीत के साथ मूर्ति की पूजा करी होगी। और जो रस्मी परमार्थ के तौर पर कार्रवाई की है, तो नक़्ली रूप की भी प्राप्ति नहीं होगी।

(३०) सच्चे परमार्थी को चाहिये कि भेदी और अभ्यासी गुरु खोज कर, और उनकी थोड़ी पहिचान करके, सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यास में लग जावे, और जो संजम

कि बताये गये हैं, उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई अपनी दुरुस्त करता जावे। तब जो कुछ कि बचन संतों ने कहे हैं, उनकी तसदीक़ अंतर में वह आप करता जावेगा और कुल्ल मालिक की दया भी अपने अंतर में परखता जावेगा। इस तरह उसकी प्रीत और प्रतीत, चरनों में, दिन २ बढ़ती जावेगी, और एक दिन अपने मालिक के चरनों में पहुँच जावेगा।

बचन १६

राधास्वामी दयाल के चरनों में जैसी-तैसी प्रति करना चाहिये, तब सहज २ सच्चा उद्धार होता जावेगा, और एक दिन काम पूरा बन जावेगा

१-इस दुनिया में जितने कारोबार हैं और जहाँ-तहाँ जिस का मेल और मुवाफ़िक़त है, वह शौक़ और प्रतीत के सबब से जारी हैं। यानी जहाँ जिसकी प्रीत है और जिस काम में जिसका शौक़ है, वहाँ कार्रवाई आसानी और दुरुस्ती के साथ जारी है, और जिस जगह या जिस काम में किसी को ना-मुवाफ़िक़त या नफ़रत है, वहाँ कुछ कार्रवाई नहीं हो सकती है! और जो ज़बरदस्ती से कोई ऐसी जगह या ऐसे काम में कुछ कार्रवाई करावे, तो वह

दुरुस्ती से और आराम और आसानी के साथ न होगी, बल्कि उसमें हुज्जत और तकरार होने का ख़ौफ़ रहेगा।

२–जहाँ जिसकी सच्ची प्रीत या शौक़ है, वहाँ वह तन, मन और धन से कार्रवाई करने को बहुत ख़ुशी के साथ तैयार होता है, और इन तीनों को ख़र्च करके, यानी काम में लाकर, बहुत मगन होता है। और जिसके वास्ते ऐसी कार्रवाई करता है, वह भी अपने प्यार वाले की यह कार्रवाई देख कर बहुत ख़ुश होता है, और उलट कर उसकी भी इसी तरह ख़िदमत और सेवा करने को, उमंग के साथ, तैयार होता है, और आपस में मोहब्बत दिन २ बढ़ती जाती है।

३–जिस वक़्त जिस किसी का कोई प्यारा दूर से आने को होता है, तो चाहे जैसा बे-वक़्त होवे, और चाहे उस वक़्त शिद्दत से सरदी या गरमी या बारिश होती होवे, पर वह शख़्स बग़ैर किसी ख़्याल और सोच के, उसी वक़्त घर से चल कर रेल के स्टेशन पर, या थोड़े फ़ासले पर, पहले से पहले, अपने दोस्त या प्यारे से मिलने को जाता है, और उस वक़्त उसकी सुरत और मन बहुत ताक़त के साथ तन को वहाँ पहुँचाते हैं कि जिस से, जिस क़दर जल्दी मुमकिन होवे, अपने प्यारे का दीदार करे, और उस से मिल कर आनन्द पावे। और जब दोनों

आपस में मिलते हैं, तब दोनों बहुत ख़ुश होते हैं और उस ख़ुशी में सब तकलीफ़ या थकावट, जो जागने या बारिश या गरमी और सरदी वग़ैरा के सबब से आयद हुई होवे, एक छिन में दूर हो जाती है।

४–इससे ज़ाहिर है कि सुरत और मन और इन्द्रिय सब मोहब्बत यानी प्रीत के बस हैं। जहाँ और जिस में प्रीत आ जाती है, वहाँ यह उमंग के साथ कार्रवाई करते हैं और उस में किसी तरह का थकाव या तकलीफ़ नहीं होती।

५–इसी तरह, जहाँ असली प्रीत नहीं है, पर धन या और किसी चीज़ या काम के लालच से शौक़ पैदा हुआ है, तो वहाँ भी, मन और इन्द्रिय और तन, बहुत तवज्जह और मेहनत के साथ कार्रवाई करके, उस शख़्स को, जिससे वह लालच का काम पूरा होने वाला है, राज़ी और ख़ुश करके अपना मतलब निकालते हैं।

६–ख़ुलासा यह है कि सुरत, मन और इंद्रिय और तन, प्रीत या कोई मतलब या किसी किस्म के मतलब की आसा के आधीन है। जहाँ इन में से कोई बात होगी, वहीं वे शौक़ और उमंग के साथ कार्रवाई करने को तैयार होवेंगे।

७–और जहाँ कि प्रीत या कोई मतलब या उसके थोड़ी देर बाद पूरे होने की आस नहीं है, लेकिन ख़ौफ़

किसी क़िस्म के नुक़सान या तकलीफ़ का है या दबाव है, तो वहाँ भी, हुक्म के मुवाफ़िक़, मन, तन और इन्द्रियाँ दुरुस्ती के साथ काम करते हैं। पर ऐसी कार्रवाई में वह ख़ुशी और उमंग कि जो प्रीत और मतलब की जगह होती है, नहीं होती है, और न वैसा आराम और आसानी उस काम के करने में मालूम होती है।

८—लेकिन जिस जगह कि ख़ौफ़ अपने प्यारे की नाराज़गी या तकलीफ़ का है, या अपने आराम और आनन्द में ख़लल और विघ्न पड़ने का है, तो ऐसी जगह मन और इन्द्रियाँ और तन, वैसे ही उमंग और शौक़ के साथ काम देते हैं जैसे कि ख़ास प्रीत की जगह, और उस कार्रवाई में किसी तरह की तकलीफ़ नहीं मालूम होती है।

९—अब समझना चाहिये कि संत अथवा राधास्वामी मत में, सिर्फ़ प्रेम के ऊपर ज़ोर दिया है कि जितनी और जिस क़दर हो सके, सच्चे मालिक और सच्चे गुरु के चरनों में प्रतीत के साथ प्रीत करना चाहिये। जो थोड़ी-बहुत भी प्रीत होवेगी, तो वक़्त सतसंग बाहर के, मन और चित्त तवज्जह के साथ परमार्थी बचन सुनेंगे और गुरु स्वरूप का मोहब्बत के साथ दर्शन करेंगे, और अंतर में अभ्यास के वक़्त, मन और सुरत और इन्द्रियाँ, शब्द और स्वरूप में, थोड़े बहुत, उमंग के साथ लगेंगे, और इस तरह जब